जैनत्व की गौरव गाथा

भाग-३

प्रकाशक
धर्मोदय साहित्य प्रकाशन
सागर (म. प्र.)

❑ **आशीर्वाद**
आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज

❑ **कृति**
जैनत्व की गौरव गाथा भाग-३

❑ **प्रस्तुति**
ब्र॰ डॉ॰ भरत जैन

❑ **संस्करण**
प्रथम, अक्टूबर, २०१७

❑ **आवृत्ति**
११००

❑ **ISBN**
९७८-९३-८२९५०-३६-३

❑ **मूल्य**
५०/-

❑ **प्राप्ति स्थान**
धर्मोदय साहित्य प्रकाशन
बाहुबली कॉलोनी, सागर (म॰प्र॰)
मो॰ ०९४२४९-५१७७१
dharmodayat@gmail.com

❑ **मुद्रक**
विकास ऑफसेट प्रिंटर्स
एण्ड पब्लिसर्स
प्लाट नं॰ ४५, सेक्टर-एफ,
औद्योगिक क्षेत्र, गोविन्दपुरा
भोपाल (म॰प्र॰)

आमुख

विराट व्यक्तित्व के धनी एवं समूची जैन संस्कृति के आधुनिक एवं वैज्ञानिक प्रस्तोता ब्र॰ डॉ॰ भरत जैन द्वारा जैनत्व की गौरव गाथा के प्रथम और द्वितीय भाग प्रकाशित किए जा चुके हैं। अब यह तृतीय भाग प्रकाशित किया जा रहा है। डॉ॰ भरत के द्वारा इन पुस्तिकाओं की आकर्षक, चित्र सहित, प्रभावक तथा गुणवत्तापूर्ण प्रस्तुति की देश में ही नहीं अपितु पूरे विश्व के चिंतन क्षेत्रों में सराहना की जा रही है। अपनी साम्प्रदायिक सीमाओं से ऊपर उठकर समेकित जैन संस्कृति को अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज पर विराजमान करने की दृष्टि से उन्होंने सर्वोपयोगी विषयों का संकलन कर सराहनीय और अनुकरणीय कार्य किया है।

प्रथम भाग ''बिन्दु से सिन्धु का गौरव'' में उल्लेखित भैया विनयकुमार (खनियाधाना-सुनवाहा) की भावना—''यह कृति प्रत्येक साधु, प्रवचनकार, विद्वानों के पास तो होना ही चाहिए। साथ ही समाज के भी प्रत्येक व्यक्ति के बैठक कक्ष में स्थायी रूप से रखी जानी चाहिए'' को जीवंत करने के लिए हम अपनी पूरी क्षमता से ठोस प्रयास करें।

द्वितीय भाग के प्रासंगिक में अंकित ब्र॰ संजय भैया के शब्दों—''इतिहास के सागर में से मोती निकालने के कार्य में ब्र॰ भाई डॉ॰ भरत जैन का यह प्रयास अनुकरणीय, प्रशंसनीय एवं स्तुत्य है, वे अविरल-अविराम और अनवरत ऐसे कार्यों में लगे रहें।'' की प्रेरक शक्ति से प्रोद्भूत तृतीय भाग का हम अपने पवित्र मन से स्वागत करते हैं।

डॉ॰ जैन ने जैन संस्कृति के विशाल परिदृश्य से जैन विरासत, जैन तीर्थ स्थल, जैनधर्म और दर्शन तथा ऐतिहासिक स्थल, ऐतिहासिक महापुरुष, महत्त्वपूर्ण पुस्तकों, साधुओं एवं श्रेष्ठीजनों पर केन्द्रित महत्त्वपूर्ण विषयों को गुलाब के सुन्दर और सुगंधित पुष्पों की भाँति चयन कर सार रूप में इन तीनों पुस्तिकाओं में समाहित किया है। हमें पूर्ण विश्वास है कि जैन संस्कृति की आधारभूत इन तीनों पुस्तिकाओं की त्रिवेणी अपने शीतल जल से जैन संस्कृति ही नहीं अपितु पूरी भारतीय संस्कृति को अभिसिंचित पल्लवित और पुष्पित करेगी।

सुरेश जैन
(आई॰ ए॰ एस॰)
३०, निशात कॉलोनी,
भोपाल (मध्यप्रदेश) ९४२५०-१०१११

प्राक्कथन .....

मानव जीवन में सत् संस्कार एवं धार्मिक शिक्षा का अति महत्त्वपूर्ण स्थान है। बच्चों की प्रथम पाठशाला माता-पिता एवं पारिवारिक माहौल से यह सब सहज ही प्राप्त किया जा सकता है। बदलते परिवेश, माता-पिता की व्यस्तता एवं पारिवारिक विघटन के बढ़ते हुए प्रभाव के कारण सत् संस्कार एवं धार्मिक शिक्षा की ओर बालकों एवं पालकों का रुझान दुर्लभता को प्राप्त होता जा रहा है।

दृश्यमान वर्तमान कालिक परिस्थितियों में जैनत्व की सुरक्षा एवं सम्यग्ज्ञान की प्रभावना का एक मात्र प्रभावकारी उपाय यह समझ में आता है कि तीर्थंकरों की वाणी, जिनशासन का इतिहास, हमारा कर्त्तव्य इत्यादि विषयों का ज्ञान कराने वाला सत् साहित्य आकर्षक पद्धति के अनुसार, कम पृष्ठीय, सचित्र प्रकाशित कर जन-जन, बालक-बालिकाओं के हाथों में नि:शुल्क प्रदान किया जावे। जिससे की वे सब सारभूत तत्त्व को समझ सकें।

यद्यपि कतिपय जैन श्रद्धालु, धर्मावलम्बी जन इस क्षेत्र में पुरुषार्थ कर रहे हैं, किन्तु कुछ समय एवं क्षेत्र की सीमा में ही प्रकाशित साहित्य सिमट कर रह जाता है। श्रावकों के अंत:करण में जिनधर्म के प्रति आस्था, रुचि के अभाव में अथवा प्रकाशित साहित्य मंहगा होने से जन-जन तो क्या? जैन समाज के श्रावक भी उसका लाभ नहीं ले पाते हैं।

आने वाली जैन युवा पीढ़ी समीचीन जैनधर्म के सिद्धान्तों को, सदाचरण की बातों को जान सकें, जैनत्व के प्रति प्रत्येक के मन में गौरव जागृत हो सके, इन्हीं कुछ भावनाओं को लेकर हमने यह लघु प्रयास किया है। आपसे अनुरोध है कि आप साहित्य वितरण में सहयोगी बनकर जिनशासन की प्रभावना में भागीदार बनते हुए, अपने सम्यक्त्व को दृढ़ करते हुए पुण्य लाभ अर्जित करें।

इस कृति का समारम्भ 'जैन प्रतीक चिह्न' से तथा समापन 'जैन गुफाएँ' से किया गया है। इस कृति में जैन संस्कृति और इतिहास की गौरव गाथा से सम्बन्धित ४४ बिन्दुओं पर संक्षिप्त विवेचन सचित्र प्रस्तुत किया गया है।

मैं अपने इस विश्वास की अभिव्यक्ति करता हूँ कि यह कृति प्रत्येक शोधार्थी, जैन संस्कृति के प्रेमी, ज्ञान के आराधक के लिए उपयोगी और संग्रहणीय प्रमाणित होगी।

इस कृति में जिन महत्त्वपूर्ण कृतियों, ग्रंथों से सामग्री का चयन प्रत्यक्षत: परोक्षत: किया गया है, उन सब लेखकों के प्रति मैं अपने हृदय के गहनातिगहन तल से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

संत शिरोमणि आचार्यप्रवरश्री विद्यासागरजी महाराज के संयम स्वर्ण महोत्सव २०१७-१८ के पावन अवसर पर उन्हीं के कर-कमलों में सादर समर्पित यह कृति...

डॉ. भरत जैन

अनुक्रमणिका

१.	जैन प्रतीक चिह्न	५
२.	अनेकान्तवाद और स्याद्वाद	६
३.	जैनधर्म में ईश्वर	७
४.	दिगम्बर जैन साधु का संयमोपकरण मयूर पिच्छिका	८
५.	दिगम्बर जैन साधु का शौचोपकरण कमण्डलु	९
६.	जैन परम्परा में राष्ट्रधर्म	१०
७.	नयनाभिराम : सिद्धक्षेत्र नैनागिरि	११
८.	कैलाश पर्वत : जीवन्त दर्शन	१२
९.	मुक्तागिरि का वैभव	१३
१०.	अतिशय क्षेत्र बाहुबली (कुम्भोज)	१४
११.	स्थापत्य कला का प्रतिनिधि मंदिर	१५
१२.	मुक्ताकाश समवसरण तीर्थ, उदयपुर	१६
१३	ग्वालियर का स्वर्ण मंदिर	१७
१४.	आस्था का नव सूर्योदय : गुणायतन	१८
१५.	बहुउद्देशीय दिगम्बर जैन ज्ञानोदय तीर्थ	१९
१६.	जैनधर्म और गौतम बुद्ध	२०
१७.	जैन साम्राज्ञी शान्तलादेवी	२१
१८.	महाराणा प्रताप और जैन धर्म	२२
१९.	अहिंसा और महात्मा गाँधी	२३
२०.	अकबर पर जैनधर्म का प्रभाव	२४
२१.	भारत की पहली स्वतंत्रता संग्राम सेनानी जैन रानी अब्बक्का देवी	२६
२२.	भारत रत्न : आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज	२८
२३.	ज्ञान और चारित्र के संगम : आचार्य श्री ज्ञानसागरजी महाराज	२९
२४.	व्रती सेनापति आबू की देशभक्ति	३०
२५.	अनेक भव्य जिनालयों के निर्माता राजा हरसुखराय	३१
२६.	अनुपम ग्रन्थ : सिरिभूवलय	३२
२७.	अनमोल कृति : दिगम्बरत्व और दिगम्बर मुनि	३३
२८.	प्राचीन संस्कृत सूत्र ग्रन्थ : तत्त्वार्थसूत्र	३४
२९.	भारत का प्रतिनिधि नीतिग्रन्थ : कुरल काव्य	३५
३०.	जैन परम्परा और यापनीय संघ	३६
३१.	सबसे बड़ी पद्मासन प्रतिमा	३७
३२.	हमारी धरोहर : जैन पाण्डुलिपियाँ	३८
३३.	प्राकृत जैन शास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान	३९
३४.	जीवदया का अग्रणी संस्थान दयोदय महासंघ, भोपाल	४०
३५.	ज्ञानतीर्थ : अनेकान्त ज्ञान मंदिर	४१
३६.	तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय	४२
३७.	दानवीर : सेठ माणिकचन्द जौहरी	४४
३८.	वन्दनीय व्यक्तित्व : पं० माणिकचंद्रजी कौन्देय	४५
३९.	समाज सेविका : महिलारत्न पंडिता चंदाबाईजी	४६
४०.	जैन जगत् के गौरव : पं० रतनलाल जैन	४७
४१.	जांबाज अमरशहीद : अर्चित वार्डिया	४८
४२.	एक सच्ची बलिदानी गाथा अमरशहीद गौतम जैन	४९
४३.	विश्व के कोने-कोने में विराजमान है जैनधर्म	५०
४४.	जैन गुफाएँ	५२

1 जैन प्रतीक चिह्न

भगवान् महावीर के २५०० वें निर्वाण वर्ष (१९७४-१९७५ ई०) में जैनधर्म के सभी आम्नायों को मानने वालों के द्वारा एक मत से एक प्रतीकात्मक चिह्न को मान्यता दी गई, यों तो अहिंसा और परोपकार की भावना से जैन कहीं भी अपनी पहचान बना लेते हैं; क्योंकि उनका जीवनोद्देश्य ही है : परस्परोपग्रहो जीवानाम्, यह चिह्न जैनों को एक अलग पहचान देता है।

- जैन प्रतीक चिह्न का स्वरूप जैन शास्त्रों में वर्णित तीन लोक के आकार जैसा है।
- इसका निचला भाग अधोलोक, बीच का भाग मध्यलोक एवं ऊपर का भाग ऊर्ध्वलोक का प्रतीक है।
- चन्द्राकार सिद्धशिला का सूचक है। अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी भगवान् इस सिद्धशिला पर अनादिकाल से अनन्तकाल तक के लिये विराजमान हैं।
- सिद्धशिला के ऊपर एक बिन्दु सिद्धजीव का प्रतीक है।
- इसके ऊपरी भाग में प्रदर्शित स्वस्तिक की चार भुजायें चार गतियों-नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य एवं देवगति का प्रतीक है।
- स्वस्तिक के ऊपर प्रदर्शित तीन बिन्दु सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र को दर्शाते हैं और संदेश देते हैं कि सम्यक् रत्नत्रय के बिना प्राणी मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकता है।
- चिह्न के निचले भाग में प्रदर्शित हाथ अभय की सूचना देता है और लोक के सभी जीवों के प्रति अहिंसा का भाव रखने का प्रतीक है।

- हाथ के बीच में २४ आरों वाला चक्र २४ तीर्थंकरों द्वारा प्रणीत जिनधर्म को दर्शाता है एवं बीच में प्रदर्शित अहिंसा जैनधर्म के प्रमुख सिद्धान्त को प्रतिपादित करता है।
- परस्परोपग्रहो जीवानाम् का अर्थ है—जीव एक-दूसरे का उपकार करते हैं। यह जैन प्रतीक चिह्न संसारी प्राणी की वर्तमान दशा एवं इससे मुक्त होकर सिद्धशिला तक पहुँचने का मार्ग दर्शाता है।
- आजकल लगभग सभी जैन पत्र-पत्रिकाओं, वैवाहिक कार्ड, क्षमावाणी कार्ड, भगवान् महावीर निर्वाण दिवस, दीपावली एवं जैन समाज से जुड़े किसी भी कार्यक्रम की पत्रिकाओं में इस प्रतीक चिह्न का प्रयोग किया जाता है।

2 अनेकान्तवाद और स्याद्वाद

- अनेक अर्थात् बहुत, अंत यानि धर्म, वस्तु अनेक धर्मों से सहित है, यही अनेकान्त है। जैसे एक व्यक्ति पिता की अपेक्षा से बेटा है, पत्नि की अपेक्षा से पति, बच्चे की अपेक्षा पिता तथा बहिन की अपेक्षा से भाई भी है। अनेक धर्मात्मक वस्तु को किसी एक दृष्टि की मुख्यता से कथंचित्/स्यात् शब्द के साथ कहना स्याद्वाद है। जैसे वह पुरुष कथंचित् पिता है तो कथंचित् भाई भी।
- स्यात् का अर्थ शायद नहीं, कथंचित् पूर्ण सत्य ज्ञान है।
- अनेकांत प्रतीक है भी का, एकान्त प्रतीक है ही का।
- अनेकान्त का आश्रय लेने से सदाचार, सद्विचार उत्पन्न होते हैं। स्वच्छन्दता, अहंकारिता मिटती है एवं मानसिक संघर्ष दूर होता है। स्वतंत्रता का सपना अनेकान्त के द्वारा ही साकार हो सकता है।

प्रस्तुत चित्र में ऐकान्तिक आग्रह से ऊपर उठकर
अनेकान्तिक आकाश की ओर बढ़ने की प्रेरणा दी गई है।

3

जैनधर्म में ईश्वर

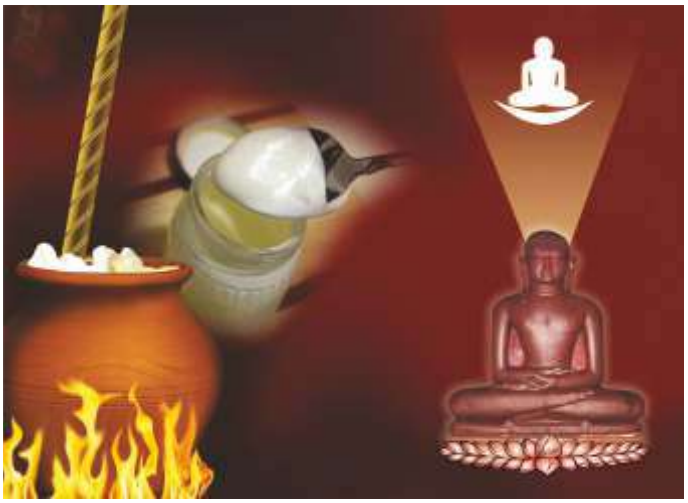

- ईश्वर, परमात्मा, स्वयंभू, ब्रह्मा, शिव, बुद्ध, विष्णु, परमेश्वर, सिद्ध, मुक्त आदि सभी नाम कर्म मल से अलिप्त, शुद्धत्व को प्राप्त आत्मा के ही हैं।
- संसार की प्रत्येक आत्मा में ईश्वर बनने की शक्ति है, यदि वह समीचीन पुरुषार्थ करे तो वह भी महावीर, राम, अर्जुन आदि के समान भगवान् बन सकता है।
- ईश्वर सारी दुनियाँ के पदार्थों को दर्पणवत् जानता-देखता तो है किन्तु किसी का भला-बुरा नहीं करता, न ही किसी को सुखी-दुखी बनाता है।
- मुक्त हुआ परमात्म दशा को प्राप्त आत्मा पुनः कभी संसार में लौटकर नहीं आता जैसे घी का पुनः दूध रूप में परिणमन नहीं होता है।

पंजाबकेसरी लाला लाजपतराय के शब्दों में–

क्या मुसीबतों, विषमताओं और क्रूरताओं से परिपूर्ण यह जगत् एक भद्र परमात्मा की कृति हो सकता है ? जबकि हजारों मस्तिष्कहीन विचार तथा विवेकशून्य, अनैतिक, निर्दयी, अत्याचारी, जालिम, लुटेरे, स्वार्थी मनुष्य विलासताओं का जीवन बिता रहे हैं और अपने अधीन व्यक्तियों को हर तरह से अपमानित, पददलित करते हैं और मिट्टी में मिलाते हैं। इतना ही नहीं चिड़ाते भी हैं, दुखी लोग अवर्णनीय कष्ट सहते हैं। फिर भी ये अपने जीवन की आवश्यक वस्तुएँ क्यों नहीं पाते ? भला ये सब विषमताएँ क्यों ? क्या ये न्यायशील ईश्वर के कर्तव्य हो सकते हैं? मुझे बताओ तुम्हारा ईश्वर कहाँ है ? मैं तो इस निस्सार जगत् में कहीं भी उसका नामोनिशान नहीं पाता।

4

दिगम्बर जैन साधु का शौचोपकरण

कमण्डलु

- कमण्डलु भारतीय संस्कृति का सारोपदेष्टा है। उसका आगमनमार्ग बड़ा और निर्गमनमार्ग छोटा है। अधिक ग्रहण करना और अल्प व्यय करना अर्थशास्त्र का ही नहीं, सम्पूर्ण लोकशास्त्र का विषय है। संयम का पाठ कमण्डलु से सीखना चाहिए।
- कमण्डलु में भरे हुए जल की प्रत्येक बूँद के समुचित उपयोग हेतु एक पतली टोटी लगी होती है। जिसके द्वारा उतना ही जल निकाला जाता है, जितना आवश्यक होता है।
- हाथ-पैर प्रक्षालन के लिए, शुद्धि के लिए कमण्डलु की आवश्यकता होती है।
- दिगम्बर सम्प्रदाय में मुनि, एलक, क्षुल्लक तथा आर्यिकाएँ कमण्डलु धारण करती हैं।
- कमण्डलु अलग है और जल अलग है। भेदविज्ञान का अहर्निश प्रबोध कमण्डलु से प्राप्त होता है।

5

दिगम्बर जैन साधु का संयमोपकरण

मयूर पिच्छिका

- दिगम्बर मुनि के पास संयम उपकरण के रूप में पिच्छिका होती है। यह जिन मुद्रा एवं करुणा का प्रतीक है। पिच्छिका और कमण्डलु मुनि के स्वावलम्बन के दो हाथ हैं। इसके बिना अहिंसा महाव्रत, आदान निक्षेपण समिति तथा प्रतिष्ठापना समिति नहीं पल सकती। प्रतिलेखन शुद्धि के लिए पिच्छिका की नितान्त आवश्यकता है। आचार्य वट्टकेर कहते हैं— णिपिच्छे णत्थि णिव्वाणं (मूलाचार १०/२५)
- दिगम्बर सम्प्रदाय में मुनि, एलक, क्षुल्लक तथा आर्यिकाएँ पिच्छिका धारण करते हैं।
- मयूर पंख वाली पिच्छिका के पाँच गुण—१. धूल ग्रहण न करना, २. कोमलता, ३. लघुता, ४. धूल पसीना ग्रहण नहीं करती, ५. सुकुमार (झुकने वाली) होती है। यहाँ तक देखा है कि इसके बालों को आँखों में डाल दें तो आँसू नहीं आते।
- कार्तिक मास में मयूर स्वेच्छा से अपने पंख छोड़ता है। इसके लिए किसी भी प्रकार से मयूर को पीड़ा नहीं देनी पड़ती है। इसमें किसी भी तरह की हिंसा नहीं है। कार्तिक मास के पहले मयूर इसको बोझ मानता है। पंख हटने पर बड़ा हर्ष मानता है। जैसे गाय दूध दुहने के बाद हल्का महसूस करती है।
- श्रावक का कर्त्तव्य होता है कि स्वयं मयूर पंख की पिच्छिका तैयार करें तथा मुनियों की पिच्छिका पुरानी हो जाने पर उन्हें नवीन पिच्छिका उपकरण दान करें।
- मोर के अद्भुत सौंदर्य के कारण भारत सरकार ने २६ जनवरी, १९६३ में इसे राष्ट्रीय पक्षी घोषित किया।

❑ गुरुदेव श्री विद्यासागरजी महाराज के पास कुछ अंग्रेज आये, पिच्छिका की ओर इशारा करते हुए पूछा कि यह क्या है? आप क्यों रखते हैं? तब आचार्य श्री यह पिच्छिका हमारी यूनिफार्म है, इसके बिना साधु सात कदम से अधिक नहीं चल सकता यदि चलना पड़े तो उसे प्रायश्चित का भागीदार बनना पड़ता है। साधु इसके माध्यम से छोटे-बड़े जीवों की रक्षा हेतु परिमार्जन करते हुए बैठना, कमण्डलु, पुस्तक आदि उठाना-रखना करते हैं।

6 जैन परम्परा में राष्ट्रधर्म

- जैन परम्परा में जैन श्रमण तीन संध्याओं में आत्मध्यान के समय ''सत्त्वेषु मैत्रीं .... श्लोक के माध्यम से हे भगवन्! मेरी आत्मा सदा सभी प्राणियों पर मैत्री भाव को धारण करे।'' राष्ट्रभावना भाते हैं।
- दिगम्बराचार्य पूज्यपाद स्वामी ने शांतिभक्ति में क्षेमं सर्व प्रजानां.... श्लोक में स्पष्टतया राष्ट्र की संवृद्धि एवं सुख शांति की भावना भायी है।
- मेरी भावना में पंडित श्री जुगलकिशोर मुख्तार ने राष्ट्रधर्म का जो अमर संदेश दिया है वह तारीफ-ए-काबिल है, देखिए—''बनकर सब युगवीर हृदय से देशोन्नति रत रहा करे'' अर्थात् हे देश के लोगों! तुम अपने हृदय को महावीर बनाओ और देश की उन्नति में हरदम प्रयासरत रहो। देशोन्नति में आतंकवाद बाधक है। आतंकवाद के रहते देशोन्नति नहीं हो सकती। देश की उन्नति करना हमारा राष्ट्रधर्म है।
- हम प्रतिदिन शान्तिधारा में भगवान् के सामने राष्ट्र की शुभ मंगल कामना करते हुए प्रार्थना करते हैं - ''सर्वराष्ट्रमारीं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि सम्पूर्ण राष्ट्र में व्याप्त होने वाली महामारी नष्ट हो-नष्ट हो। सर्वदेशमारीं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि सम्पूर्ण देश में व्याप्त होने वाली महामारी नष्ट हो-नष्ट हो।''
- वर्तमान युग के प्रखर चिन्तक, दार्शनिक, महाकवि, श्रमण शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज ने राष्ट्रीय संदेश दिया है— दूषण न भूषण बनो, बनो देश के भक्त।
  उम्र बढ़े बस देश की, देश रहे अविभक्त॥

  हे देश के लोगो ! तुम कृतघ्नी मत बनो, तुम कृतज्ञ बनो। अपने देश के उपकार को सदा याद रखो और अपने देश से प्यार करो और देश के वफादार नागरिक बनो, जिसमें तुम्हारे देश की तरक्की हो और तुम्हारा देश एक अखण्ड राष्ट्र बना रहे।
- आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के आशीर्वाद से देश के विभिन्न स्थानों पर सार्वजनिक हित के लिए चिकित्सालय, गौशाला, विद्यालय, विकलांग केन्द्र, धर्मार्थ औषधालय, प्रशासनिक प्रशिक्षण संस्थान का निर्माण किया गया है तथा प्राणिमात्र के कल्याण के लिए हथकरघा स्वरोजगार को प्रोत्साहन दिया, गुरुदेव का इतना अधिक राष्ट्रप्रेम है कि इण्डिया हटाओ-भारत लाओ का नारा दिया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे जैनधर्म में राष्ट्रधर्म का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। मंत्रों में, शास्त्रों, पुराणों में शिलालेख और प्रशस्तिओं में राष्ट्रभावना का स्पष्ट उल्लेख है। आवश्यकता इस बात की है कि हमें अपनी पूजा-प्रार्थनाओं की शुभ मंगल कामनाओं को अपनी संवेदनाओं का विषय बनाना चाहिए और राष्ट्रभक्ति के साथ अपने जीवन में राष्ट्र धर्म का पालन करना चाहिए।

हमारा राष्ट्रधर्म : गरीबों का उद्धार करना, बेईमानी नहीं करना, किसी की बेइज्जती नहीं करना, अनुशासन का पालन करना, न्यायपूर्वक आजीविका करना, सद्भावना रखना और सदाचार का पालन करना यह नागरिकों का धर्म है, प्रत्येक देशवासी को इसका पालन करना चाहिए।

7 नयनाभिराम : सिद्धक्षेत्र नैनागिरि

(रेशंदीगिरि-ऋषीन्द्रगिरि) जिला छतरपुर (मध्यप्रदेश)

- यह सिद्धक्षेत्र मध्यप्रदेश के १२ सिद्धक्षेत्रों में से शाश्वत प्राचीनतम सिद्धक्षेत्र है।
- बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ के काल में मोक्ष पधारे वरदत्तादि पंच मुनिराजों की निर्वाण भूमि, तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ का लगभग २९०० वर्ष पूर्व समवसरण यहाँ आया था।
- खुदाई करने पर १३ जिन प्रतिमाओं से युक्त मन्दिर प्राप्त हुए थे। सर्वाधिक प्राचीन जिनालय ११०९ एवं सन् १०४२ का है। सन् १९५५-५६ में भगवान् पार्श्वनाथ की खड़गासन ९ हाथ की अति मनोज्ञ प्रतिमा एवं चौबीसी जिनालय की पंच कल्याणक प्रतिष्ठा हुई।
- यह क्षेत्र सहस्त्रों वर्षों के प्राच्य धार्मिक एवं सांस्कृतिक इतिहास को संजोय अपनी गौरव गाथा गा रहा है।
- यहाँ पर चालीस हजार साल पुराने शैल चित्रों से सुशोभित सिद्धशिला है। जो नैनागिरि के इतिहास, संस्कृति, परम्परा की धरोहर है।
- इसी क्षेत्र में बाबा दौलतरामजी वर्णी द्वारा १९०२ को गोम्मटसार ग्रन्थ का हिन्दी पद्यानुवाद पूर्ण किया गया तथा १९०४ को नैनागिरि पूजन की रचना भी की।
- आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज द्वारा वर्ष १९७७ से १९८७ के दशक में नैनागिरि में ७२ साधुओं/आर्यिकाओं को दीक्षा प्रदान की गई। इसी क्षेत्र से आचार्यश्री ने आर्यिका दीक्षाएँ देना प्रारम्भ की थीं।
- वर्ष १९७८ में आचार्यश्री ने नैनागिरि तीर्थ पर भयंकर ज्वर और सशस्त्र डाकुओं के उपसर्ग पर विजय प्राप्त की तथा साथ चलने वाले सर्प को सम्बोधित किया।
- आचार्यश्री ने यहाँ पर तीन चातुर्मास और तीन शीतकाल किए। उन्हीं की प्रेरणा से वर्ष १९८१ से १९८६ के बीच समवसरण मंदिर बना तथा सन् १९८७ में गुरुदेव के सान्निध्य में पञ्च-कल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सव पूर्वक सम्पन्न हुआ।
- यहाँ ३८ मन्दिर पहाड़ी पर, १३ मन्दिर तलहटी में, २ मन्दिर पारस सरोवर में स्थित हैं। मंदिर नंबर ३५ में विराजमान महावीर स्वामी के अभिषेक एवं प्रक्षाल के समय ओंकार ध्वनि सुनाई देती है।
- यहाँ के जैन विद्यालय के सुविकसित परिसर में २६५ बच्चे अध्ययन करते हैं।

8 कैलाश पर्वत : जीवन्त दर्शन

- विक्रम संवत् १८०६ में ब्र. लामचीदासजी ने भगवान् ऋषभदेव की निर्वाणभूमि एवं भरत चक्रवर्ती द्वारा बनवाये ७२ जिनालयों के दर्शन करने का दृढ़ संकल्प किया। अपनी संकल्प शक्ति के सहारे चीन, तिब्बत आदि बहुत से देशों का भ्रमण करते हुए एक ऐसे स्थान पर जा पहुँचे जहाँ से अब आगे जाना संभव नहीं था।
- ब्रह्मचारीजी लिखते हैं कि–यह सगरगंग नाला है। चार कोस गहरा चौड़ा है, जहाँ पर घाट का नामो-निशान नहीं है, आगे ३२ कोस ऊँचा गिरि फिर पर्वत की आठ पैड़ी एक योजन की है। ब्रह्मचारीजी ने संकल्प लिया कि- जब तक कैलास के दर्शन नहीं होंगे, तब तक आहार-पानी त्याग और कदाचित् दर्शन हो भी जाएँ तो शेष २३ तीर्थंकरों की निर्वाण भूमि के दर्शन कर मुनिव्रत धारण करूँगा। इस तपस्या में आहार पानी के त्याग किए ४ दिन हो गए। तब एक व्यन्तर महा दयावान मनुष्य का रूप धरकर मुझसे कहता है, तुम कौन हो, तब हमने कहा कि हम प्रभु के दास हैं, तब व्यन्तर ने ब्रह्मचारी जी के दृढ़ संकल्प को देखकर कहा - जैसा हम कहते हैं, वैसा करो। व्यन्तर ने कहा-तू आँख बंदकर। हमने आँख बंद की, तब व्यन्तर ने हमको कैलाश पर्वत पर ले जाकर दर्शन कराये और दो पहर (छह घण्टे) में हमको उसी जगह छोड़ गया।
- दर्शन के समय उस व्यन्तर ने कैलाश के सम्बन्ध में सम्पूर्ण जानकारी दी। मंदिरों की उत्पत्ति, टोंक तथा वनस्पति, धातु की खान, मुनियों की निर्वाणभूमि, प्रतिमाओं के आकार आदि।
- वहाँ पर प्रथम ऋषभदेव भगवान् की टोंक स्वर्ण जड़ित है, ८०० धनुष ऊँचा टोंक है। जिसकी महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता है। फिर वहाँ से चल ७२ मंदिर स्वर्णमयी, रत्नमयी, ताम्रमयी धातुओं के हैं। १००० धनुष ऊँचा, ६०० धनुष का मंदिर, २०० धनुष की गुम्बज, चूलिका १०० धनुष की कलश रत्नजड़ित महासुंदर हैं।
- यहाँ अतीत-अनागत-वर्तमान की तीन चौबीसी की ७२ प्रतिमा हैं। जैसे उनके शरीर का रंग है वैसे ही रत्नों की प्रतिमा विराजमान हैं। इस मंदिर में ८४ जाति के रत्न जड़े हैं। प्रतिमा पद्मासन हैं और वे ७२ मंदिर भरतचक्रवर्ती ने तथा उनके पुत्रों ने बनवाये।
- आज बर्फ से आच्छादित ७२ जिनालयों के दर्शन दुर्लभ हैं। सगर चक्रवर्ती के ६० हजार पुत्रों के द्वारा जिनालयों की सुरक्षा हेतु चारों तरफ जो खायी खोदी गई थी, वही सगरगंग नाला लगता है। यह कैलाश पर्वत सिद्धक्षेत्र चीन देश की सीमा में आता है।

पुस्तक -'मेरी कैलाश यात्रा' : ब्र. लामचीदास जी

9 मुक्तागिरि का वैभव

- मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र, परतवाड़ा से १४ किलोमीटर तथा अमरावती से ६५ किलोमीटर की दूरी पर मध्यप्रदेश के बैतूल जिला में स्थित है।
- सतपुड़ा पर्वत के नयनाभिराम हरे-भरे वृक्षों के मध्य २५० फुट ऊँचाई से गिरती जलधारा के मध्य १६वीं शताब्दी के कई मंदिर हैं। कहा जाता है—यहाँ १० वें तीर्थंकर शीतलनाथजी भगवान् के समवसरण आने पर मोतियों की वर्षा हुई थी, इस कारण से यह क्षेत्र मुक्तागिरि कहलाता है।
- इस क्षेत्र से साढ़े तीन करोड़ मुनि निर्वाण को प्राप्त हुए थे। यहाँ पर पार्श्वनाथ भगवान् का पहला मंदिर शिल्प कला का सुंदर उदाहरण है। प्रतिमा सप्तफण मण्डित एवं प्राचीन है।
- जनश्रुति के अनुसार—यहाँ समय-समय पर केसर की वर्षा होती है।
- मंदिर क्रमांक १० मेंढ्रगिरि के नाम से प्रसिद्ध है, पहाड़ी के गर्भ में खुदा हुआ अति प्राचीन मंदिर है। इसकी नक्काशी, स्तम्भों व छत की अपूर्व रचना दर्शनीय है।
- यहाँ पर भगवान् शांतिनाथ की अति मनोज्ञ प्रतिमा है। पहाड़ पर ५२ तथा तलहटी में २ जिनालय हैं।
- भारत सरकार द्वारा इसे पर्यटन क्षेत्र घोषित किया गया है। यूरोपियन लोग इस तीर्थ का दर्शन को आते थे। उनका श्रद्धान है कि—जो एक बार भी इस पर्वत का दर्शन कर जाता है। उसकी तरक्की होती है और धन भी प्राप्त होता है।
- आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के तीन चातुर्मास सम्पन्न हुए एवं इस क्षेत्र पर आचार्य श्री द्वारा ११ फरवरी १९९८ में ९ मुनि दीक्षाएँ एवं १६ मई १९९१ में ७ क्षुल्लक दीक्षाएँ प्रदान की गईं।

10 अतिशय क्षेत्र बाहुबली (कुम्भोज)

- दक्षिण भारत के कोल्हापुर जिले में यह क्षेत्र स्थित है।
- करीब ढाई सौ साल पहले नान्द्रे गाँव के पूज्य मुनि श्री १०८ बाहुबली महाराज यहाँ तपस्या एवं ध्यान करते थे। उनकी त्याग-तपस्या के प्रभाव से हिंसक शेर आदि उन्हें व किसी भी दर्शनार्थियों को कष्ट नहीं देते थे, इसी कारण यह तीर्थ श्री अतिशय क्षेत्र बाहुबली नाम से प्रसिद्ध हुआ।
- दक्षिण भारत में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को प्रारम्भ करने के उद्देश्य से आषाढ़ शुक्ल दोज, १ जुलाई १९३४ के शुभ दिन केवल पाँच विद्यार्थियों को लेकर परम पूज्य गुरुदेव १०८ श्री समंतभद्रजी महाराज ने बाहुबली ब्रह्मचर्याश्रम संस्था का शुभारम्भ किया था। जिसमें आज लगभग ३५० से भी अधिक विद्यार्थी लाभ ले रहे हैं तथा १५०० से अधिक विद्यार्थी संस्था के विद्यालय में विद्यार्जन कर रहे हैं।
- परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज के उपदेशानुसार सन् १९६३ में संस्था में भगवान् बाहुबली की २८ फीट ऊँची मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान की गई।
- सन् १९७० में और सन् १९८० में भारत के कतिपय सुप्रसिद्ध दिगम्बर सिद्धक्षेत्रों की मनोहारी रचना तैयार की गई है। इसके अतिरिक्त श्री महावीर समवसरण जिनमन्दिर, स्वयम्भू मन्दिर, रत्नत्रय जिन मन्दिर, नन्दीश्वर, पंचमेरु की सुन्दर रचना, मानस्तम्भ, कीर्ति स्तम्भ आदि कई दर्शनीय एवं वंदनीय स्थानों का निर्माण हुआ, जिससे यह एक पावन तथा पुण्यवर्धक तीर्थधाम बना हुआ है।
- गुरुदेव समन्तभद्रजी के आशीर्वाद से शील, ज्ञान, प्रेम, सेवा और व्यवस्था रूप गुरुकुल की पंचसूत्री प्रणाली के अनुसार कारंजा, स्तवनिधि, सोलापुर, खुरई, कारकल, वागेवाड़ी, एलोरा, तेरदाल, कुंथलगिरि इत्यादि क्षेत्रों पर यह संस्था अपना कार्य सुचारू रूप से कर रही है।

11 स्थापत्य कला का प्रतिनिधि मंदिर

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र संघीजी मंदिर, सांगानेर (जयपुर)

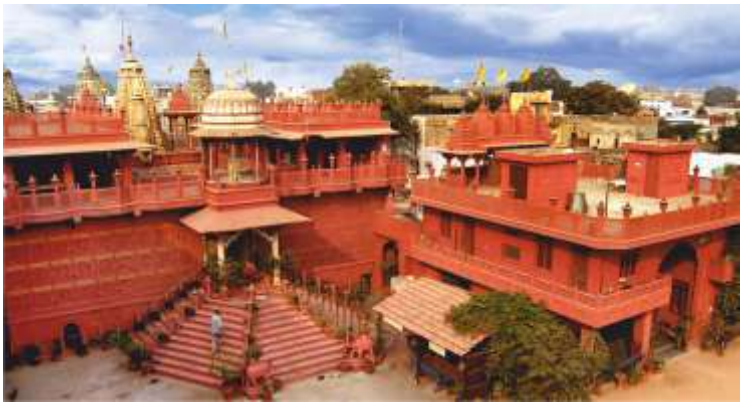

- यह मंदिर प्राचीनतम स्थापत्य कला का प्रतिनिधित्व करता है। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार यह मंदिर कई चरणों में बनाया गया है, अंतिम चरण का निर्माण १० वीं शताब्दी का माना जा सकता है।
- मंदिर के उत्तुंग गगनचुम्बी ८ शिखरों एवं १२ छोटे शिखरों को दूर से देखकर ही दर्शकों को खजुराहो के शिखरबद्ध मंदिरों का स्मरण हो आता है। पाषाण में कमल-पुष्प, बेल एवं तीर्थंकरों के सिर पर जलाभिषेक करते हुए हाथियों का शिल्प-सौष्ठव देखते ही बनता है।
- मूलनायक श्री आदिनाथ भगवान् की अतिप्राचीन अलौकिक प्रतिमा का रहस्योद्घाटन करते हुए जैनाचार्यों ने कहा है कि—यह प्रतिमा साक्षात् जिनेन्द्र भगवान् की अनुभूति कराती है। इसकी शरण में आने से श्रद्धालुओं को व्याधियों से मुक्ति मिलती है एवं इसके स्मरण से सदैव आत्मबल मिलता है।
- यह मंदिर सात मंजिला है, तलघर के मध्य में यक्षदेव रक्षित प्राचीन जिन चैत्यालय विराजमान है। इसकी विशेषता है कि जिस स्थान पर यह विराजमान है, वहाँ मात्र बालयति तपस्वी दिगम्बर साधु ही अपनी साधना के बल पर प्रवेश कर सकते हैं।
- जिनमंदिर के मध्य प्रवेश द्वार के दोनों तरफ दीवार पर भक्तामर स्तोत्र के ४८ काव्यों को सचित्र दर्शाते हुए बारीक शिल्पकला युक्त लाल पत्थरों की जुड़ाई का कार्य भी देखते ही बनता है, जो कि सम्पूर्ण भारतवर्ष में पत्थर पर भक्तामर स्तोत्र वर्णन का प्रथम प्रयोग है।
- मुनिपुंगव श्री सुधासागरजी महाराज ने १९९४, १९९९ एवं २०१७ में यक्षरक्षित प्राचीन जिन चैत्यालय दर्शनार्थ निकाल कर भक्तों को कृतार्थ कर पुण्य संचय एवं कर्म निर्जरा में निमित्त बने।
- इस क्षेत्र में मुनिपुंगव श्री सुधासागरजी महाराज की प्रेरणा से सहस्त्रकूट, त्रिकाल चौबीसी, नंदीश्वरद्वीप, विदेहक्षेत्रस्थ बीस तीर्थंकर जिनालय, पंचमेरु जिनालय तथा संयम कीर्ति स्तम्भ के निर्माण की योजनायें प्रस्तावित हैं। यहीं पर उच्च शिक्षा के लिए युवक-युवतियों के लिए दो छात्रावासों के निर्माण की योजना भी चल रही है।

12 मुक्ताकाश समवसरण तीर्थ, उदयपुर

शिलान्यास : ३ जनवरी, १९९७, पञ्च कल्याणक : २९ जनवरी, २००७

- मेवाड़ की ऐतिहासिक नगरी उदयपुर के सुरम्य नैसर्गिक परिवेश में उदयपुर-अहमदाबाद राजमार्ग के पाँचवें किलोमीटर पर नैसर्गिक झील गोवर्धनसागर के किनारे छोटी पहाड़ी को कलात्मक रूप से सुसज्जित करके मुक्ताकाश समवसरण तीर्थ का निर्माण किया गया है। यह अनुकृति कृत्रिम और नैसर्गिक रचना कौशल का अनुपम उदाहरण है। अभी तक देश में ऐसी दूसरी संरचना अन्यत्र नहीं है।
- शास्त्रों के वर्णन के अनुरूप खुले आसमान के नीचे बनाया गया यह समवसरण तीर्थ वलयाकृत, कोट-पगार-परिखा आदि से परिवेष्टित है। चारों ओर से प्रवेश करते ही श्वेत संगमरमर से निर्मित ऊँचे मानस्तम्भ और गुलाबी पाषाण से निर्मित भव्य जिनालयों तथा देव-भवनों का दर्शन, धर्म लाभ के साथ पुण्यार्जन कराता है, नाट्यशालाएँ, वापिकाएँ और जलवृक्ष (फव्वारे) आदि की रचना तीर्थ की सुन्दरता में वृद्धि करती है। बीच-बीच में चौबीस तीर्थंकर भगवन्तों के दीक्षा-वृक्षों का आरोपण और परिक्रमा में श्वेत शिला-फलकों को उकेरे गये उनके जीवन-वृत्त दर्शक की दृष्टि को बाँध लेते हैं।
- समवसरण के मध्य में अशोक वृक्ष के नीचे आठवें तीर्थंकर चन्द्रनाथ स्वामी की चार समान अवगाहना वाली विशाल पद्मासन प्रतिमाएँ चारों ओर मुख करके विराजमान की गई हैं। इससे भगवान का सर्व हितकारी, सर्वतोभद्र रूप नयन-पथगामी बन जाता है। बारह सभाएँ प्राणी मात्र को समानता का आश्वासन देती हैं। भगवान का प्रभावक प्रभामण्डल भव्यजनों को मंगल की प्रेरणा देता है और छायादार अशोक वृक्ष समस्त शोक और भय दूर करके उन्हें अभय प्रदान करता है। सम्पूर्ण रचना नयनाभिराम बन पड़ी है। नव निर्मित समवसरण तीर्थ अर्हन्त भगवान की उस धर्मसभा का सही प्रतिनिधित्व करता है जिसके माध्यम से जिन धर्म की परम्परा अनादिकाल से चली आ रही है।
- मुक्ताकाश समवसरण तीर्थ के स्वप्न शिल्पी स्व. श्री मोतीलाल एवं श्रीमती गुलाबबाई मिण्डा की कल्पना को साकार करने में उनके उत्तराधिकारी श्री महावीर मिण्डा आदि ने उदारता पूर्वक अपनी सम्पत्ति का सदुपयोग करके अनुकरणीय और सराहनीय कार्य किया है।

13 ग्वालियर का स्वर्ण मंदिर

- इस मंदिर का निर्माण भादो सुदी २, संवत् १७६१ में हुआ एवं मंदिर की पूर्णता में लगभग ४५ साल का समय लगा, जिसमें श्रेष्ठतम कारीगरों, वास्तुविदों एवं समाज के श्रेष्ठियों ने अपने अथक परिश्रम, लगन एवं निष्ठा का सौभाग्य प्राप्त किया।
- इस मंदिरजी के निर्माण में तत्कालीन श्रेष्ठियों ने २ मन सोने का उपयोग स्वर्णकला को निखारने एवं संवारने में किया था।
- भगवान पार्श्वनाथ की मूर्ति की छटा अद्भुत निराली है। वीतरागता अप्रतिम है। इस मूर्ति को तीन अलग-अलग समय में देखने पर मूर्ति की छवि अलग-अलग वर्णों की दिखाई देती है।
- इस मंदिर में १ इंच से लेकर साढ़े पाँच फीट की अवगाहना की खड्गासन तथा पद्मासन एवं त्रिकाल चौबीसी के साथ भगवान् विराजमान हैं।
- श्री मंदिरजी के गुम्बद के भीतरी भाग में सोने की कारीगरी एवं खम्बों पर काँच की जड़ाई का कार्य देखते ही बनता है। जिसमें असली नगीनों एवं प्राकृतिक रूप से तैयार किए रंगों का उपयोग किया गया है, जो अत्यधिक आकर्षक, कलापूर्ण एवं दर्शनीय है, जो कि भारतवर्ष में अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलता है।
- यहाँ पर दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्रों की एवं पौराणिक कथाओं और पञ्चकल्याणकों का चित्रण बड़ी मनोज्ञता से किया है।
- तीर्थंकर की माता के १६ स्वप्न एवं चन्द्रगुप्त मौर्य के १६ स्वप्नों का बड़े ही भावपूर्ण तरीके से चित्रित किये गये हैं।

14 आस्था का नव सूर्योदय : गुणायतन

श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र, सम्मेदशिखर

- संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के आशीर्वाद से एवं मुनि श्री प्रमाणसागरजी महाराज की पावन प्रेरणा, परिकल्पना और अनुभव अर्जित सम्पदा से बनने जा रहा गुणायतन विश्व में अनोखा-अद्वितीय होगा।
- आचार्यश्री ने १९ नवम्बर, २००६ को गुणायतन के लिए मंगल आशीर्वाद दिया तथा २२ फरवरी, २००८ को गुणायतन का शिलान्यास समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ।
- ५ एकड़ भूमि में बन रहे गुणायतन में चौदह गुणस्थानों को कलात्मक, उत्कृष्ट आधुनिक तकनीक द्वारा प्रस्तुति किया जायेगा।
- परम्परागत मन्दिरों एवं धर्मायतनों से पृथक् अद्भुत धर्म एवं विज्ञान के समन्वय का ज्ञान मंदिर है।
- यहाँ पर दृश्य-श्रव्य रोबोटिक्स प्रस्तुति के माध्यम से दर्शनार्थियों को समझाया जायेगा। परिसर में बनने वाले जिनालय जैन स्थापत्य और कला के उत्कृष्ट उदाहरण होंगे।
- शब्द, संगीत, एनीमेशन की बहुरंगी आभा द्वारा आत्मा द्वारा आत्मा का उज्ज्वलीकरण है। वैज्ञानिक आलोक में अंतर्मन का अभिनव आत्म विस्तार का आँखोंदेखा प्रदर्शन/अमूर्त भावों का दर्पण है।
- साधारण से साधारण तथा जैन-अजैन में असाधारण कल्पना विस्तार एवं सूझबूझ का विकास/दिव्य-गुणों का कलात्मक प्रदर्शन है।
- मॉडल्स जीवन्त झाँकियों द्वारा बच्चों को जैनधर्म के ज्ञान का अपूर्व अवसर है।

निर्माणाधीन गुणायतन

15 बहुउद्देशीय दिगम्बर जैन ज्ञानोदय तीर्थ

नारेली (अजमेर)

- श्रमण शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के आशीर्वाद एवं मुनिपुंगव श्री सुधासागरजी महाराज की प्रेरणा से ३० जून, १९९५ को ५०० बीघा के एक विशाल भूखण्ड में बहुउद्देशीय दिगम्बर जैन ज्ञानोदय तीर्थ, नारेली की स्थापना हुई। जो जयपुर-ब्यावर बाईपास में अजमेर से १० कि०मी० दूरी पर है।
- क्षेत्र का प्रमुख आकर्षण श्री आदिनाथ जिनालय में स्थापित विशाल भव्य मनोहारी भारत में प्रथम लाल पाषाण से निर्मित भगवान् ऋषभदेव की २१ फुट कमल एवं सिंहासन सहित पद्मासन प्रतिमा है। यह मंदिर भारत में अपनी विशालता एवं सौन्दर्य के लिए अनुपम है। मंदिर की भव्यता देखने प्रतिदिन हजारों लोग यहाँ आते हैं।
- गिनीज बुक में नाम दर्ज कराने की योग्यता रखने वाली विश्व में प्रथम भगवान् शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरनाथ की २४ हजार किलोग्राम (११-११ फुट) की अष्टधातु की अलौकिक, अनुपम, विशाल, सौम्य त्रिमूर्तियाँ यहाँ विराजित हैं।
- उत्तुंग पहाड़ी के प्रारम्भिक मोड़ समवसरण जिनालय, सहस्त्रफणी पार्श्वनाथ के समीप से होकर सहस्त्रकूट जिनालय पहाड़ी के दूरस्थ उत्तरांचल तक २४ जिनालय स्थित हैं। पहाड़ी की उच्चतम ऊँचाई के समीप शीतलनाथ चैत्यालय में अष्टधातु की पद्मासन प्रतिमाएँ विराजमान की गई हैं। तीर्थक्षेत्र की पहाड़ी पर सम्मेदशिखरजी, गिरनारजी, चम्पापुरजी, पावापुरीजी, कैलाश पर्वत की रचना का निर्माण एवं नंदीश्वर द्वीप का निर्माण का कार्य चल रहा है। यहाँ पर वानप्रस्थ आश्रम में ८ परिवार साधना कर रहे हैं एवं सुसमृद्ध ज्ञानोदय गौशाला संचालित है, जिसमें ७५० स्वस्थ गाय-बछड़े हैं।
- यहाँ पर अत्याधुनिक ज्ञानोदय भोजनशाला संचालित है, जिसमें १५० लोग एक साथ बैठ कर शुद्ध भोजन कर सकते हैं तथा जन-जन के स्वास्थ्य लाभ के लिए अस्पताल की बिल्डिंग तैयार हो गई है, उसमें प्रत्येक गुरुवार को आयुर्वेद चिकित्सक के द्वारा निःशुल्क परीक्षण एवं औषधि प्रदान की जाती है।
- इस क्षेत्र में लोककल्याणकारी, सामाजिक, धार्मिक ३९ योजनाओं का कार्य चल रहा है, इसलिए इस क्षेत्र को बहुउद्देशीय भारत का प्रथम तीर्थ कहा जाता है।

16 जैनधर्म और गौतम बुद्ध

- गौतम बुद्ध ने घर से निकलने के बाद ६ वर्ष तक विभिन्न प्रकार के साधना मार्ग अंगीकार किए, जिनमें एक अचेलक (दिगम्बर) मार्ग भी था। यह जैन मुनि की चर्या का अंग था।
- तीर्थंकर पार्श्वनाथ की परम्परा में दीक्षित पिहितास्रव नाम के मुनि से दीक्षित होकर बुद्धकीर्ति नामक मुनि बने। दिगम्बर मुनि की कठोर चर्या का अनुपालन न कर पाने के कारण बाद में उसे छोड़कर उन्होंने स्वतंत्र रूप से मध्यम मार्ग अपनाया। जिसे बौद्ध धर्म कहा गया।
- बौद्ध ग्रन्थ मज्झिमनिकाय के महासीहनादसुत्त में सारिपुत्त से अपने पुराने जीवन के विषय में बुद्ध स्वयं कहते हैं कि '' मैं वस्त्र रहित रहा। मैंने आहार अपने हाथ से किया (पाणिपात्री रहा) न लाया हुआ भोजन किया, न बर्तन में खाया, न थाली में खाया, न घर की ड्योढी में खाया, न खिड़की से लिया, न मूसल कूटने के स्थान पर लिया, न दो आदमियों के एक साथ खा रहे स्थान से लिया, न गर्भिणी स्त्री से लिया, न मलिन स्थान से लिया, न वहाँ से लिया जहाँ कुत्ता पास खड़ा था, न वहाँ से लिया जहाँ मक्खियाँ भिनभिना रही थीं। न मछली, न माँस, न मदिरा, न सड़ा मांड खाया, न तुष का मैला पानी पिया। मैंने एक घर से भोजन किया, सो भी एक ग्रास लिया या मैंने दो घरों से भोजन लिया सो दो ग्रास लिया। इस तरह मैंने सात घरों से लिया सो भी सात ग्रास। मैंने कभी एक दिन में एक बार, कभी दो दिन में एक बार, कभी सात दिन में एक बार लिया। कभी पंद्रह दिन भोजन नहीं किया। मैंने मस्तक, दाढ़ी व मूँछ के केशों का लोंच किया। इस केशलोंच की क्रिया को जारी रखा। मैं एक बूँद पानी पर भी दयावान था। क्षुद्र प्राणी की भी हिंसा मुझसे न हो जावे ऐसा सावधान था। इस तरह कभी तप्तायमान, कभी शीत सहता हुआ भयानक वन में नग्न रहता था, न आग तापता था। मुनि अवस्था में ध्यान लीन रहता था।'' इस तरह जैन दिगम्बर साधु से मिलता आचरण गौतम बुद्ध ने पालन किया।

(''जैन बौद्ध तत्त्वज्ञान'', लेखक ब्र. शीतलप्रसाद, पृ. २००-२०४)

17 जैन साम्राज्ञी शान्तलादेवी

- पट्टमहादेवी शान्तला होय्यसल वंश के परम प्रतापी, पराक्रमी शासक विष्णुवर्द्धन की रानी थी। इनके पिता का नाम सारसिङ्गय्य हेग्गड़े तथा माता का नाम मानिकव्वे था।
- आपका जन्म कर्नाटक के बेलम्भव ग्राम में शक सं. १०१२ के आस-पास अनुमानित किया जाता है।
- शान्तलादेवी ने अपनी माता के पूर्ण संस्कार लिए थे, फलतः वह जिनशासन की परम भक्त थी।
- शान्तलादेवी जब सात-आठ वर्ष की बालिका ही थी तभी उनके क्रिया-कलापों, विचारों तथा व्यवहार से प्रभावित हो, गुरु वोकिमय्य ने भविष्यवाणी की थी कि वह जगत-मानिनी बनकर सारे विश्व में गरिमायुक्त गौरव के साथ पूजी जाने वाली होगी। सचमुच ही जैसे ही शान्तला ने यौवनावस्था में पदार्पण किया तथा होय्यसल वंश के विष्णुवर्द्धन की प्राणवल्लभा बनकर साम्राज्ञी पद को सुशोभित किया तो गुरु की भविष्यवाणी की सफलता के साक्षात् दर्शन हुए और वह लगभग ७०-७५ विशेषणों से अलंकृत हो जगत् मानिनी कहलायी।
- साम्राज्ञी शान्तलादेवी ने श्री धवल आदि ग्रन्थ ताड़-पत्रों पर उत्कीर्ण कराये थे। इन पत्रों पर शान्तलादेवी और विष्णुवर्द्धन के चित्र अंकित हैं।
- शान्तलादेवी राजशासन, कला, संगीत तथा धार्मिक, समाज-सेवा आदि कार्यों में निष्णात थी, उनके वैयक्तिक गुणों एवं शासकीय कुशलता के फलस्वरूप तत्कालीन प्रजाजनों ने उन्हें इतने अधिक विशेषणों से अलंकृत किया था कि शायद ही संसार की कोई भी साम्राज्ञी या सम्राट् इतने अधिक अलंकारों से अलंकृत हुआ हो।
- शान्तलादेवी ने वेल्गुल के चन्द्रगिरि पर्वत पर गन्धवारण वसदि का निर्माण कराकर शान्तिनाथ भगवान् की पाँच फुट ऊँची कलापूर्ण मनोज्ञ प्रतिमा प्रतिष्ठापित कराई थी।
- शान्तलादेवी ने गन्धवारण वसदि के निर्माण के पश्चात् उसके पूजन-प्रक्षाल एवं अभिषेक हेतु वहीं पर एक गंग समुद्र नामक श्रेष्ठ सरोवर का निर्माण कराया तथा वसदि की सुरक्षा एवं दैनिक कार्यकलापों के लिए एक ग्राम भी दान किया।
- इनका जीवन पारिवारिक एवं राजनैतिक संघर्षों से भरा हुआ था। राजा द्वारा जैनेतर धर्म को स्वीकार करने पर भी आपने जैनधर्म को नहीं छोड़ा।
- शान्तलादेवी ने जैनधर्म की कीर्तिध्वजा को फहराते हुए ४० वर्ष की अल्पायु में ही देह का त्याग किया। उनकी यश-पताका आज भी लगभग नौ सौ वर्ष के इतिहास में निष्कलुष और अक्षुण्ण बनी हुई है। 'पट्टमहादेवी शान्तला' नामक पुस्तक चार भागों में प्रत्येक श्रावक-श्राविकाओं को इनका जीवन दर्शन पठनीय है।

18 महाराणा प्रताप और जैन धर्म

- मेवाड़ प्रारम्भ से ही जैन धर्म की गतिविधियों का प्रमुख स्थान रहा है। वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप (१५४०-१५९७) के समय में भी मेवाड़ में जैनधर्म का व्यापक प्रभाव था।
- इतिहास प्रसिद्ध दानवीर भामाशाह जैन प्रताप के बालसखा थे। दानवीर भामाशाह का सम्पूर्ण जीवन जैनधर्म के उच्च आदर्शों से अनुप्राणित था।
- प्रताप के मन में जैनधर्म और उसकी मान्यताओं के प्रति भी आस्था थी। प्रताप के जीवन के प्रसंग जैनधर्म के प्रति उनके प्रेम को अभिव्यक्त करते हैं। वे जैन मुनियों का बहुत आदर करते थे।
- प्रताप ने एक पत्र में लिखा था कि—जैन मुनियों के उपदेश से अकबर ने जीव हिंसा पर प्रतिबंध लगाया। अहिंसा धर्म का ऐसा उद्योत सर्वत्र होना चाहिए।
- प्रताप के समय में ही उनके प्रधानमंत्री दानवीर भामाशाह ने केशरिया जैन मंदिर का जीर्णोद्धार कराया था। प्रताप के पुत्र व उत्तराधिकारी राणा अमरसिंह ने जैन मुनि के उपदेश से पर्युषण पर्व के दिनों में हिंसा नहीं करने का पट्टा जारी किया।
- अनेक इतिहासकारों की प्रसिद्ध पुस्तकों में महाराणा प्रताप को पूर्ण शाकाहारी बताया है। स्वतंत्रता और स्वाभिमान की रक्षा के लिए लम्बे समय तक जंगलों में रहे, वहाँ रहकर उन्होंने घास के बीज एवं वन्य अनाज की रोटियाँ खाईं।
- शक्ति और शौर्य के धनी प्रताप को इतिहासकारों ने धर्मानुरागी बताया है। बाल्यावस्था से प्रताप को जैनधर्म का सामीप्य और सान्निध्य मिला। प्रताप के जीवन की अनेक विशिष्टताएँ जैनधर्म के सिद्धान्तों की फलश्रुति है।

19 अहिंसा और महात्मा गाँधी

२६ दिसम्बर, १९०९ ई. को श्री अर्जुनलाल सेठी, ब्र. शीतल प्रसाद, श्री माणिकचन्द पानाचन्द मुंबई, श्री हीरालाल नेमचन्द सोलापुर, रायबहादुर अण्णासाहेब लट्ठे ने लाहौर में बोर्डिंग की स्थापना की, जिसमें २४ विद्यार्थी सर्वप्रथम रखे गये। इस बोर्डिंग के सुपरिडेंट लाला लाजपतराय को बनाया गया था, क्योंकि लाला लाजपतराय जैन थे। उस समय के वातावरण में 'अहिंसा से देश आजाद नहीं होगा' - ऐसा चिंतन बढ़ रहा था। अत: लाला लाजपतरायजी ने यह पत्र गाँधीजी को लिखवाया। जिसके उत्तरस्वरूप महात्मा गाँधी जी ने निम्न पत्र लाला लाजपतराय जी को लिखा था।

Mahatma Gandhi says :-

" With due deference to Lalaji, I must join this issue with him when he says that the elevation of the doctrine of ahimsa to the highest position contributed to the downfall of india. there seems to be no historical warrant for the belief that an exaggerated practice of Ahimsa synchronised with our becoming bereft of manly virtues. during the past 1500 years, we have, as a nation, given ample proof of physical courage but we have been torn by internal dissensions and have been dominated by love of self instead of love of country. we have, that is to say, been swayed away by the spirit of irreligion rather than religion. "

लाला लाजपतराय (लाहौर) जैनधर्म में जन्म लेकर भी अहिंसा परमधर्म के माहात्म्य को समझ नहीं पाए परन्तु महात्मागाँधी ने समझाते हुए लिखा है कि - यद्यपि मैं लालाजी का बहुत आदर करता हूँ, फिर भी, मैं उनके इस मत से सहमत नहीं कि अहिंसा-सिद्धान्त के चरम विकास के कारण ही भारत का अध:पतन हुआ है।

ऐसे कोई ऐतिहासिक तथ्य हमारे सामने नहीं आये हैं, जिनसे यह विश्वास किया जा सके कि अहिंसा की पराकाष्ठा से ही हमारे मानवीय गुणों का घात-प्रतिघात हुआ है।

पिछले लगभग १५०० वर्षों में भारत-राष्ट्र ने शौर्य-वीर्य सम्बन्धी अनेक प्रेरक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, फिर भी, यदि हम टूटे हैं तो केवल अपनी अन्तर्कलहों के कारण ही। स्वराष्ट्र के प्रति समर्पित प्रेम करने के बदले पारस्परिक स्वार्थों के कारण ही हमारा अध:पतन हुआ है।

हम तो यहाँ तक भी कह सकते हैं कि नैतिक/धार्मिक वृत्ति की अपेक्षा अनैतिक/ अधार्मिक वृत्तियों के कारण ही हमारा अध:पतन हुआ है।

- (यथार्थ प्रकाश, पृष्ठ ५६)

20 अकबर पर जैनधर्म का प्रभाव

- विश्व के सर्वकालीन महान् नरेशों में मुगल सम्राट् अकबर की गणना की जाती है। उसकी सफलता के कारणों में उसकी उदार नीति, न्याय-प्रियता, धार्मिक सहिष्णुता, वीरों और विद्वानों का समादर तथा स्वयं को भारतीय एवं भारतीयों का ही समझना सम्भवतया प्रमुख थे।
- अकबर के राज्यकाल में लगभग दो दर्जन जैन साहित्यकारों एवं कवियों ने साहित्य सृजन किया, कई प्रभावक जैन संत हुए, मंदिरों का निर्माण हुआ, जैन तीर्थ-यात्रा संघ चले और जैन जनता ने कई सौ वर्षों के पश्चात् पुनः धार्मिक संतोष की साँस ली। स्वयं सम्राट् ने प्रयत्नपूर्वक तत्कालीन जैन गुरुओं से सम्पर्क किया और उनके उपदेशों से लाभान्वित हुए।
- एक बार सम्राट् को भयानक शिरशूल हुआ तो उसने यतिजी को बुलवाया। उन्होंने कहा कि वह तो कोई वैद्य-हकीम नहीं हैं, किन्तु सम्राट् ने कहा कि उनपर उसका विश्वास है, वह कह देंगे तो पीड़ा दूर हो जायेगी। यतिजी ने सम्राट् के मस्तक पर हाथ रखा और उसकी पीड़ा दूर हो गयी। मुसाहबों (दरबारियों) ने इस खुशी में कुर्बानी कराने के लिए पशु एकत्र किए। सम्राट् ने सुना तो उसने तुरन्त कुर्बानी को रोकने का और पशुओं को छोड़ देने का आदेश दिया और कहा कि मुझे सुख हो, इस खुशी में दूसरे प्राणियों को दुःख दिया जाए, यह सर्वथा अनुचित है।

- मुनि शान्तिचन्द्र ने भी सम्राट् को बड़ा प्रभावित किया था। एक वर्ष ईदुज्जुहा (बकरीद) के त्यौहार पर जब वह सम्राट् के पास थे तो एक दिन पूर्व उन्होंने सम्राट् से निवेदन किया कि वह उसी दिन अन्यत्र प्रस्थान कर जायेंगे, क्योंकि अगले दिन यहाँ हजारों-लाखों निरीह पशुओं का वध होने वाला है। उन्होंने स्वयं कुरान की आयतों से यह सिद्ध कर दिखाया कि कुर्बानी का मांस और रक्त खुदा तक नहीं पहुँचता, वह इस हिंसा से प्रसन्न नहीं होता, बल्कि परहेजगारी से प्रसन्न होता है, रोटी और शाक खाने से ही रोजे कबूल हो जाते हैं। इस्लाम के अन्य अनेक धर्म ग्रन्थों के हवाले देकर मुनिजी ने सम्राट् और दरबारियों के हृदय पर अपनी बात की सच्चाई जमा दी। अतएव सम्राट् ने घोषणा करा दी कि इस ईद पर किसी जीव का वध न किया जाये।
- पाण्डे राजमल्ल ने १५८५ ई. के लगभग लिखा कि—धर्म के प्रभाव से सम्राट् अकबर ने जजिया (एक प्रकार का कर जो हिन्दुओं पर लगता था) बन्द करके यश का उपार्जन किया, हिंसक वचन उसके मुख से भी नहीं निकलते थे, जीवहिंसा से वह सदा दूर रहता था, अपने धर्मराज्य में उसने द्यूतक्रीड़ा और मद्यपान का भी निषेध कर दिया था।
- विद्याहर्ष सूरि ने अपने अंजना-सुंदरीरास (१६०४ ई०) में अकबर द्वारा जैन गुरुओं के प्रभाव से गाय, भैंस, बैल, बकरी आदि पशुओं के वध का निषेध, पुराने कैदियों की जेल से मुक्ति, जैन गुरुओं के प्रति आदर प्रदर्शन, दान-पुण्य के कार्यों में उत्साह लेना इत्यादि का उल्लेख किया है।
- महाकवि बनारसीदास ने अपने आत्मचरित में लिखा है कि जब जौनपुर में अपनी किशोरावस्था में उन्होंने सम्राट् अकबर की मृत्यु का समाचार सुना था तो वह मूर्च्छित होकर गिर पड़े थे और अन्य जनता में भी सर्वत्र त्राहि-त्राहि मच गयी थी। यह तथ्य उस सम्राट् की लोकप्रियता का सूचक है।
- फतहपुर सीकरी के महलों में अपने जैन गुरुओं के बैठने के लिए सम्राट् ने विशिष्ट जैन कलापूर्ण सुन्दर पाषाणनिर्मित छतरी बनवायी थी, जो ज्योतिषी की बैठक कहलाती है।
- अकबर कहता था कि—मेरे लिए यह कितने सुख की बात होती कि यदि मेरा शरीर इतना बड़ा होता कि समस्त मांसाहारी केवल उसे ही खाकर संतुष्ट हो जाते और अन्य जीवों की हिंसा न करते। प्राणी हिंसा को रोकना अत्यन्त आवश्यक है, इसलिए मैंने स्वयं मांस खाना छोड़ दिया है।
- स्त्रियों के सम्बन्ध में वह कहा करता था, यदि युवावस्था में मेरी चित्तवृत्ति अब जैसी होती तो कदाचित् मैं विवाह ही नहीं करता। किससे विवाह करता? जो आयु में बड़ी हैं, वे मेरी माता के समान हैं, जो छोटी हैं, वे पुत्री के तुल्य हैं और जो समवयस्का हैं उन्हें मैं अपनी बहनें मानता हूँ।
- वर्ष के कुछ निश्चित दिनों में पशु-पक्षियों की हिंसा को उसने मृत्युदण्ड का अपराध घोषित कर दिया था।
- स्मिथ कहता है कि इस प्रकार का आचरण और जीवहिंसा निषेध की कड़ी आज्ञाएँ जारी करना जैन गुरुओं के सिद्धान्तों के अनुसार चलने का प्रयत्न करने के ही परिणाम थे और पूर्वकाल के जैन नरेशों के अनुरूप थे, क्या आश्चर्य है जो अनेक वर्गों में प्रसिद्ध हो गया कि अकबर ने जैनधर्म धारण कर लिया है।

प्रमुख ऐतिहासिक जैन पुरुष और महिलाएँ ग्रन्थ से साभार

21 भारत की पहली स्वतंत्रता संग्राम सेनानी
जैन रानी अब्बक्का देवी

- कर्नाटक के तटीय प्रान्तों में अब्बक्का के सम्बन्ध में अनेक लोकगीत और किंवदंतियाँ प्रसिद्ध हैं। पीढ़ी दर पीढ़ी बच्चों को उनके साहस की कहानियाँ सुनाई जाती हैं। तटीय कर्नाटक के लोक थियेटर तथा यक्षगान शैली में भी रानी की कीर्ति गाई जाती है।
- अब्बक्का की स्मृति में उनके शहर उल्लाल में उनका सैनिक वेशभूषा में कांस्य का स्टेच्यू लगाया गया। उल्लाल के चौक का नाम वीर रानी चौक है। प्रतिवर्ष वीर रानी अब्बक्का महोत्सव मनाया जाता है। वीर महिलाओं को अब्बक्का प्रशस्ति पुरस्कार भी दिया जाता है।

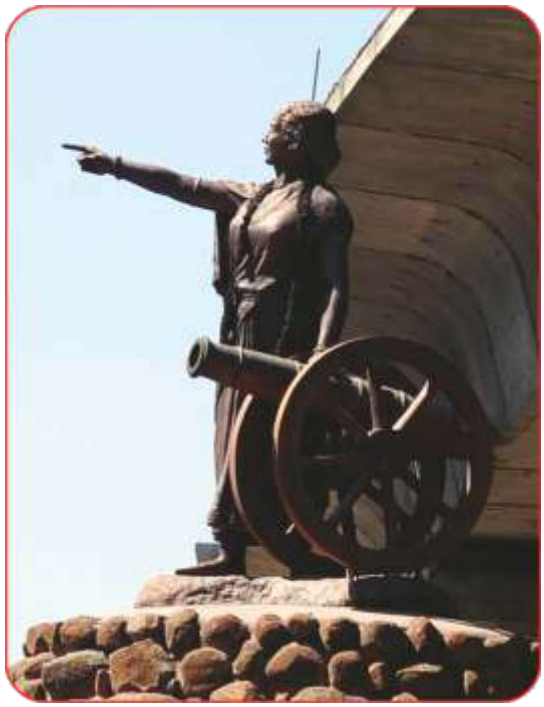

- भारत की पहली महिला स्वतंत्रता संग्राम सेनानी और शहीद एक जैन महिला अब्बक्का रानी थी।
- गौरव की बात है कि उनका परिवार जैन श्रुत संरक्षण में महनीय योगदान देने वाले शहर मूलबद्री के राज परिवार से सम्बन्धित रहा है।
- हमारा भारतवर्ष प्राचीन काल से ही 'सोने की चिड़िया' कहा जाता रहा है, जो इसकी समृद्धि और विपुल प्राकृतिकसम्पदा का सूचक है। इस समृद्धि की कहानी सुनकर यूरोप में पुर्तगालियों ने सबसे पहले भारत से व्यापार सम्बन्ध बढ़ाना प्रारम्भ किया। पुर्तगालियों ने नये समुद्री मार्ग की खोज की।
- वास्को-डि-गामा नामक पुर्तगाली अफ्रीका महाद्वीप के चक्कर लगाते हुए २० मई, १४९८ को कालीकट पहुँचा था। गोवा पर अपना नियन्त्रण स्थापित करने के पश्चात् पुर्तगालियों ने अपना ध्यान दक्षिणी तट की ओर केन्द्रित किया। सर्वप्रथम १५२५ में उन्होंने दक्षिण कनारा तट पर आक्रमण किया एवं मंगलौर बन्दरगाह को नष्ट कर दिया। मंगलौर के समीप (लगभग ८-१० कि॰ मी॰) उल्लाल एक समृद्ध बन्दरगाह था एवं अरब व अन्य पश्चिमी देशों में मसालों के व्यापार का प्रमुख केन्द्र था। व्यापार का मुख्य व लाभदायक केन्द्र होने के कारण पुर्तगाली इस पर अपना नियन्त्रण स्थापित करना चाहते थे।

- उस समय उल्लाल की रानी अब्बक्का थी, जो चौटा वंश से सम्बन्धित थी। इस वंश ने तटीय कर्नाटक के अनेक भागों पर शासन किया था उनकी राजधानी पुट्टीगे थी। उल्लाल इस वंश की सहायक राजधानी थी। पुर्तगालियों ने उल्लाल पर कब्जा करने के अनेक प्रयास किये क्योंकि उल्लाल सामरिक दृष्टिकोण से भी बहुत महत्त्वपूर्ण था। लगभग ४० वर्ष तक अब्बक्का ने पुर्तगालियों के हर प्रयास को निरर्थक कर दिया। उनके साहस के लिए उन्हें अभय रानी के नाम से जाना जाता है। वह उन प्रारम्भिक भारतीयों में से एक थीं, जिन्होंने औपनिवेशिक शक्तियों के विरुद्ध लोहा लिया। अत: उन्हें भारत की प्रथम महिला स्वतन्त्रता सेनानी के रूप में भी जाना जाता है।
- अब्बक्का यद्यपि जैन धर्मावलम्बी थी परन्तु उनकी सेना में सभी जातियों के लोग, हिन्दू मुस्लिम आदि सम्मिलित थे। अब्बक्का ने एक जैन मन्दिर का निर्माण कराया था जिसमें आज भी भगवान् आदिनाथ और भगवान् पार्श्वनाथ के जिनबिम्ब विराजित हैं। अब्बक्का समय निकाल कर यहीं दर्शन-पूजन करने जाती थीं।
- पुर्तगाली अब्बक्का की रणनीतियों से बहुत परेशान थे और चाहते थे कि अब्बक्का उनके समक्ष आत्मसमर्पण कर दें किन्तु अब्बक्का ने ऐसा करने से मना कर दिया। अत: पुर्तगालियों ने १५५५ में अब्बक्का से लड़ने के लिए एडमिरल डोम अलवारा डी सिल्वेरिया के नेतृत्व में सेना भेजी परन्तु रानी ने आक्रमण का सफल प्रतिकार कर पुर्तगालियों को पराजित कर दिया।
- १५५७ में पुर्तगालियों ने मंगलूर को लूटकर बर्बाद कर दिया। १५६८ में उन्होंने अपना ध्यान उल्लाल की ओर केन्द्रित किया, अब्बक्का ने उन्हें पुन: पराजित कर दिया। पुर्तगाली गवर्नर एन्टोनिओ नोरोन्हा द्वारा जोवोआ पेक्सोटो सेनापति को एक सैनिक बेड़े के साथ (रानी को बाध्य करने को) भेजा गया उन्होंने उल्लाल पर नियन्त्रण किया और राजमहल में घुस गये। रानी बचकर निकल गई और एक मस्जिद में उसने शरण ली। उसी रात २०० सैनिकों के साथ रानी ने पुर्तगालियों पर हमला बोला। इस हमले में जनरल मारा गया। ७० पुर्तगाली सैनिक बन्दी बना लिये गये तथा अनेक भाग गये। रानी ने अपने सहयोगियों से मिलकर एडमिरल मैस्करेनहारा को मार दिया और उन्हें मंगलौर बन्दरगाह छोड़ने को बाध्य कर दिया।
- १५६९ में पुर्तगालियों ने न केवल मंगलौर जिले पर पुन: कब्जा कर लिया अपितु कुन्दापुर पर भी कब्जा कर लिया। इसके बावजूद भी रानी एक चुनौती बनी रही। रानी के नाराज पति की सहायता से पुर्तगाली उल्लाल पर आक्रमण करने में सफल हुए अन्त में बहादुरी पूर्वक जंग लड़ते हुए अब्बक्का अपने पति की धोखेबाजी के कारण युद्ध हार गयी तथा बन्दी बना ली गयी। जेल में बहादुरी पूर्वक विद्रोह करते हुए लड़ते-लड़ते शहीद हो गई।
- कर्नाटक की इतिहास एकेडेमी ने एक सड़क का नाम रानी अब्बक्का देवी रोड रखा है।
- भारत सरकार ने रानी अब्बक्का देवी के सम्मान में १५ जनवरी, २००३ को एक विशेष आवरण जारी किया।

22

भारत रत्न
आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज

- साधु तुल्य निर्मल चारित्र वाले चिर-स्मरणीय प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री भारत गौरव आचार्य देशभूषणजी के चरणों में हजारों व्यक्तियों के बीच २-३ घण्टे तक बैठे रहते थे, उन्होंने आचार्य श्री से यह आशीर्वाद माँगा था कि मैं भी आपकी तरह परमहंस संन्यासी बन जाऊँ। गुरुदेव द्वारा पिच्छिका से आशीर्वाद देते ही उनका मुखमण्डल प्रसन्न हो अपार आनंद का भाव प्रकट कर रहा था।
- १२ अप्रैल, १९७२ को भारतीय संसद भवन में स्वयं पहुँचे तथा भगवान् महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव आयोजन की राष्ट्रीय समिति की बैठक में भाग लिया इस सभा की अध्यक्षा प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी थीं। आचार्य श्री के आशीर्वाद से भारत की आध्यात्मिक राजधानी अयोध्या में ३३ फुट ऊँची भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा विराजमान कराई गई।
- जयपुर नगर में खानिया के निकटवर्ती पर्वत चूलगिरि पर चौबीसी का निर्माण तथा क्षेत्र का विकास आपके आशीर्वाद का सुफल है।
- आचार्य श्री द्वारा अनेक तमिल, कन्नड़ ग्रन्थों का हिन्दी, मराठी में भाषानुवाद तथा हिन्दी में लिखे ग्रन्थों का कन्नड़, मराठी इत्यादि भाषाओं में अनुवाद किया गया तथा हिन्दी, मराठी, गुजराती, कन्नड़ एवं बंगला में स्वतंत्र ग्रन्थ भी लिखे हैं।
- भारतीय मेधा ज्ञान विज्ञान साहित्य-सामर्थ्य का अद्‌भुत उदाहरण सिरी भूवलय ग्रन्थ का प्रकाशन आपकी कृपा का महत प्रसाद है।
- भगवान महावीर और उनका तत्त्व दर्शन एक बृहत् काय ग्रन्थ है, जिसे सन् १९७३ में विमोचित किया गया था, यह ६ अध्यायों में विभाजित है, यह ग्रन्थ आचार्य श्री द्वारा रचित एवं सम्पादित है।

23

ज्ञान और चारित्र के संगम : आचार्य श्री ज्ञानसागरजी महाराज

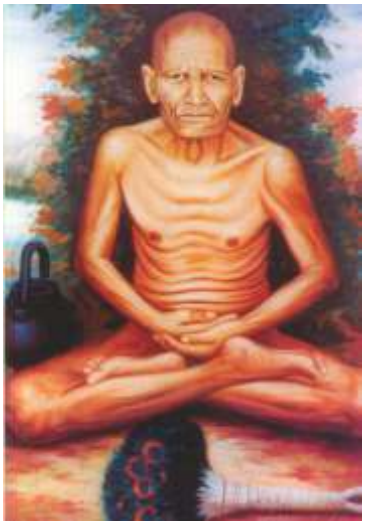

- आपने संस्कृत, हिन्दी में २९ कृतियों का सृजन किया है।
- आपके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अब तक डी॰ लिट्॰ पी-एच॰ डी॰ आदि के लगभग ५० शोधकार्य हुए हैं।
- महाकवि आचार्य ज्ञानसागरजी महाराज के सम्मान में भारत सरकार ने १० सितम्बर, २०१३ को ५ रुपये का डाक टिकट जारी किया गया।

- जैन साहित्य में चौदहवीं शताब्दी के बाद संस्कृत महाकाव्य की विछिन्न शृंखला को जोड़ने वाले, त्याग, तपस्या, निरभिमानता उदारता, साहित्य सृजना आदि गुणों की साक्षात् मूर्ति श्री ज्ञानसागरजी महाराज हुए हैं।
- आपने न्याय, व्याकरण के जैन ग्रंथों को काशी विश्वविद्यालय एवं कलकत्ता के संस्कृत पाठ्यक्रम में शामिल कराने का सफल प्रयास किया।
- आचार्य श्री ज्ञानसागरजी महाराज द्वारा दीक्षित आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज मानो उनकी जीवन्त कृति हैं, जो निरंतर प्रकाशित होकर प्राणी मात्र को आत्म प्रकाश दे रहे हैं।
- आपने कालिदास आदि कवियों के साहित्य से टक्कर लेने वाला उच्चकोटि के साहित्य की रचना कर जिनवाणी के भण्डार को वृद्धिंगत किया।
- पंडित भूरामल शास्त्री (आचार्य श्री ज्ञानसागरजी महाराज) ने अपने जीवन काल में आचार्य श्री वीरसागर, आचार्य श्री देशभूषण, आचार्य श्री शिवसागर, आचार्य श्री धर्मसागर, आचार्य श्री अजितसागर, संघस्थ आर्यिका सुपार्श्वमति, ज्ञानमति, वीरमति, अभयमति एवं ब्रह्मचारी राजमल आदि साधु वृन्दों को समय-समय पर न्याय, सिद्धान्त एवं अध्यात्म का अध्ययन कार्य कराया।
- हजारों वर्षों की सम्पूर्ण श्रमण परम्परा में ऐसा उदाहरण नहीं मिलता, जो अपने शिष्य को आचार्य बनाकर स्वयं शिष्य बन जाये। इतना मान मर्दन करना बहुत ही कठिन है, जो कि अपने शिष्य विद्यासागरजी को नमस्कार करें। धन्य हैं महाराज ज्ञानसागरजी महाराज।''

आचार्य ज्ञानसागर
ACHARYA GYANSAGAR

24 व्रती सेनापति आबू की देशभक्ति

क्षत्रिय वृत्ति के काल में वैराग्यपना दिखाने से धर्म का संरक्षण नहीं हो सकता।

– चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शांतिसागरजी महाराज

- मुसलमानों ने गुजरात पर आक्रमण कर दिया था। वहाँ के सेनापति आबू व्रती श्रावक थे। युद्ध मैदान में प्रतिक्रमण (अपने दोषों की आलोचना, सब जीवों से क्षमा का वक्त होने पर) दोनों हाथों में तलवार लिए वे बोलने ''जे मे जीवा विराहिया एगिन्दिया वा वेइन्दिया वा,'' इत्यादि।
- ये नरम-नरम हलुवा खाने वाले जैन क्या वीरता दिखा सकते हैं। सेना के सरदार के मुख से सुनकर भी वे प्रतिक्रमण पढ़ते रहे। प्रतिक्रमण समाप्त होने पर शत्रुओं के सरदार को ललकारा शूरवीरता पूर्वक युद्ध करते हुए शत्रुओं के छक्के छुड़ा दिए और मुसलमान सेनापति मैदान छोड़कर भागने लगे।
- व्रती सेनापति आबू को अभिनंदन पत्र भेंट करते हुए रानी ने हास्य में कहा कि सेनापति ! जब युद्ध में एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय जीवों तक से क्षमा माँग रहे थे तो हमारी फौज घबरा उठी थी कि एकेन्द्रिय जीव से क्षमा माँगने वाला पञ्चेन्द्रिय मनुष्य को युद्ध में कैसे मार सकेगा। इस पर व्रती श्रावक आबू ने उत्तर दिया कि महारानीजी—मेरे अहिंसा व्रत का सम्बन्ध मेरी आत्मा के साथ है। आत्महित के लिए सभी जीवों की रक्षा का भाव रखता हूँ। मेरे द्वारा अनजाने में उन्हें कष्ट हुआ हो तो क्षमा माँगता हूँ, किन्तु यदि देश, समाज, धर्मायतन की सेवा के लिए मुझे युद्ध तथा हिंसा करनी भी पड़े तो मैं उसे धर्म मानता हूँ क्योंकि ''यह शरीर भी राष्ट्रीय सम्पत्ति है।'' इसका उपयोग राष्ट्र की आज्ञा एवं आवश्यकतानुसार ही होना चाहिए। परन्तु आत्मा और मन मेरी निजी सम्पत्ति है। इन दोनों को हिंसा भाव से अलग रखना मेरे अहिंसा व्रत का लक्षण है।

साभार : कर्तव्य पथ प्रदर्शन, पृ. ५०-५१

25 अनेक भव्य जिनालयों के निर्माता राजा हरसुखराय

(सन् १७६२-१८३१)

- राजा साहब का मुख्य व्यवसाय अनेक छोटी-बड़ी रियासतों के साथ लेन-देन और साहूकारी का था। आप बड़े धर्मात्मा, ५२ मन्दिरों के निर्माता, निरभिमानी, उदार और दानी सज्जन थे।
- अनेक अभावग्रस्त साधर्मी बन्धुओं को यथोचित सहायता देकर उनका स्थितिकरण करने की, गुप्तदान देने की, सामाजिक मर्यादाओं और नैतिकता को प्रोत्साहन देने की, निज की ख्याति-मान से दूर रहने आदि की अनेक किंवदन्तियाँ उनके सम्बन्ध से प्रचलित हैं।
- मुगल सम्राट् शाहजहाँ के समय में स्वयं बादशाह के निमन्त्रण पर वह दिल्ली (शाहजहानाबाद) में आकर बस गए थे।
- दिल्ली के धर्मपुरा में अत्यन्त भव्य, कलापूर्ण एवं मनोरम जिनमन्दिर निर्माण कराया था जो सात वर्ष में बनकर तैयार हुआ था और जिसमें उस समय लगभग आठ लाख रुपये लागत आयी थी। सबसे बड़ी बात यह है कि उन्होंने उक्त मंदिर पर कहीं भी अपना नाम अंकित नहीं कराया, अपितु उसमें बहुत साधारण सा निर्माण कार्य शेष छोड़कर उसके लिए समाज से सार्वजनिक चन्दा किया और मंदिर को पंचायती बना दिया।
- प्राय: इसी घटना की पुनरावृति उन्होंने उसी समय के लगभग अपने द्वारा निर्मापित हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र के विशाल जैन-मंदिर के संबंध में की थी। वह स्थान घोर वन के मध्य उजाड़ एवं उपेक्षित पड़ा था। चारों ओर बहसूमापरीक्षितगढ़ के गूजरों, नीलोहे के जाटों, गणेशपुर के तगाओं और मीरापुर के रांगड़ों का प्राबल्य था, जो बहुधा सरकश लुटेरे थे। जैनधर्म और जैनों के साथ उनकी कोई सहानुभूति नहीं थी। राजा हरसुखराय ने आड़े समय में गूजर राजा नैनसिंह को एक लाख रुपए ऋण दिए थे। वह लौटाने आया तो लेने से इंकार कर दिया और कह दिया कि यह रुपया हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र के उद्धार के नाम लिख दिया गया है, अतएव राजा सहर्ष तैयार हो गया और मंदिर बन गया। पूर्ण होने पर सेठजी ने पूरे प्रदेश की समाज को एकत्रित किया, भारी मेला किया और नाममात्र का चन्दा करके मंदिर समाज को समर्पित कर दिया।
- राजा हरसुख राय ने अन्य यत्र-तत्र अनेक मंदिर बनवाए, किन्तु किसी के साथ अपना नाम सम्बद्ध नहीं किया। बहुधा लोग नाम के लिए धर्म करते हैं, किन्तु कीर्ति ऐसे ही उदारमना महानुभावों की अमर होती है, जो नि:स्वार्थ समर्पण भाव से ऐसे कार्य करते हैं।

26

अनुपम ग्रन्थ
सिरिभूवलय

- समस्त भाषाओं और समस्त मतों का समन्वय और एकीकरण करने वाले भुवन विख्यात भूवलय ग्रन्थ की रचना विक्रम की ८-९ वीं शताब्दी में श्री कुमुदेन्दु आचार्य ने की थी।
- इस ग्रन्थ में १८ महाभाषा और ७०० उपभाषाएँ चक्रबन्धों में समाहित हैं, जिन्हें आचार्य देव ने ५९ अध्यायों और १२५२ चक्रबंधों में प्रस्तुत किया है।
- इसमें हडप्पा संस्कृति के कुछ ऐसे रहस्य प्रमाण प्रस्तुत हैं, जिसे अनेक विद्वान् मिलकर भी नहीं खोज पाए थे। सैंकड़ों वर्षों में नहीं पढ़ पाए थे।
- इसमें ओंकार की महत्ता बतलाते हुए इसे बीजाक्षर, अंक, दिव्यनाद, परमात्म वाणी, सिद्धस्वरूप, स्वर, अक्षर, शब्द रूप भी कहा है। ताल और क्रम के साथ सांगत्य छन्द में लिखा गया है। ताल और लय से युक्त छह हजार सूत्रों तथा छह लाख श्लोकों में इसकी रचना की है।
- यह ग्रन्थ संसार का दशवाँ आश्चर्य माना गया है। महामहिम राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्रप्रसादजी ने भूवलय को राष्ट्रीय सम्पत्ति मानकर माइक्रो फिल्म बनवाकर राष्ट्रीय संग्रहालय में सुरक्षित करवाया।
- इस ग्रन्थ में पढ़ने के लिए एक भी अक्षर नहीं है। बायें से दाये तक बराबर चले जाए तो उनके अंकों की गणना २७ होती है। इसी तरह ऊपर नीचे भी २७ अंक आयेंगे। इस तरह चारों ओर से पढ़ने पर २७ अंक ही उपलब्ध होते हैं। २७×२७=७२९।
- विश्व की सभी भाषाएँ अन्तर्निहित होने से इस ग्रन्थ का नाम 'भूवलय' रखा गया, जो उसकी यथार्थता को सूचित करता है। इसमें मूल कन्नड़ लिपि का ही प्रयोग किया गया था।
- इसमें १ से ६४ तक अंक हैं २७ कोष्टक हैं। इसे अक्षर में परिवर्तित किया जाता है। जैसे—१ का अर्थ अ, ५८ का अर्थ ष, ३८ का अर्थ ट, इत्यादि।
- अंग्रेजी अंक में भी इसका ट्रान्सलेशन किया जा चुका है।
- भारतीय साहित्य में ऐसा अनुपम काव्य (ग्रन्थ) अभी तक कोई भी उपलब्ध नहीं है। आचार्य देशभूषणजी की कृपा से यह प्रकाश में आया है।

27

अनमोल कृति
दिगम्बरत्व और दिगम्बर मुनि

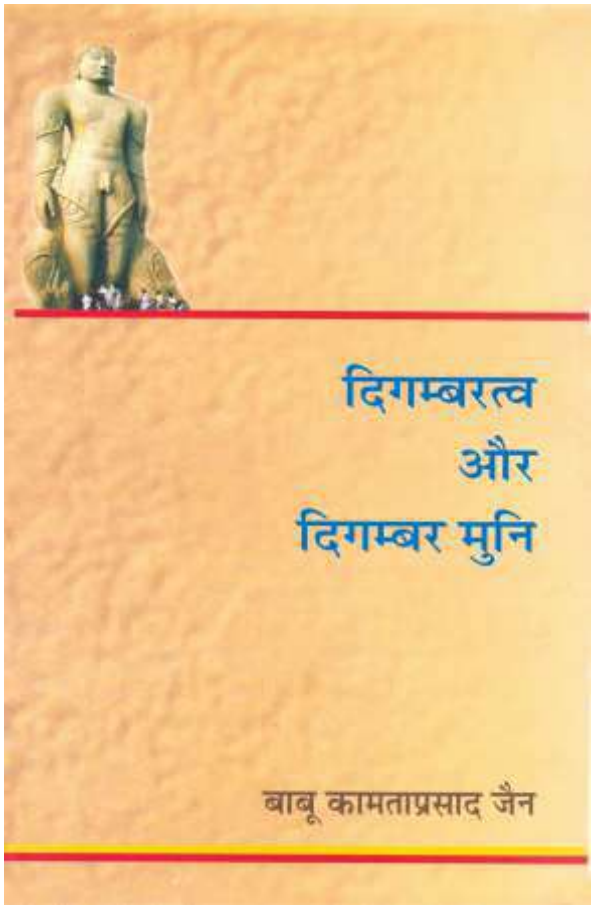

- भारतीय संस्कृति का मूलतः अध्ययन करने वाले उच्चकोटि के चिन्तक एवं मनीषी लेखकों ने श्रमण संस्कृति को प्राथमिक स्थान दिया है और दे भी रहे हैं। ऋग्देव से लेकर उपनिषद्, आगम-निगम एवं पुराण एक स्वर से यही घोषणा करते आ रहे हैं कि भारतीय संस्कृति के मूल में श्रमण धर्म या श्रमण-संस्कृति है।
- देश-विदेशों में हजारों दिगम्बर महात्मा यत्र-तत्र भ्रमण करते थे। उन तपस्वियों के चरणों में सहज ही सबका माथा झुक जाता था।
- एक समय वह भी आया कि मांडवी जिला सूरत में सरकार ने दिगम्बर मुनियों के स्वतंत्र विहार में बाधा उत्पन्न की और उसके फलस्वरूप ऐतिहासिक सत्य को उजागर करने एवं दिगम्बरत्व की सुरक्षा हेतु श्रीयुत बाबू कामताप्रसादजी जैन (एम० आर० ए० एल०) ने 'दिगम्बरत्व और दिगम्बर' मुनि नामक एक पुस्तक लिखकर तैयार की। जिसका प्रथम प्रकाशन सन् १९३२ में श्री भा० दिग० जैन शास्त्रार्थ संघ द्वारा करवाया गया।

- पुस्तक की उपयोगिता के बारे में लेखक लिखते हैं कि—मैंने तो मात्र धर्म भाव से प्रेरित होकर सत्य के प्रचार के लिए उसको लिख दिया है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी सब ही प्रकार के लोग इसे पढ़ें और अपनी बुद्धि की तर्क (तराजू) पर उसे तोलें और फिर देखें दिगम्बरत्व मनुष्य समाज की भलाई के लिए कितनी जरूरी और उपयोगी चीज है।
- प्रस्तुत पुस्तक में प्रामाणिक इतिहास को संजोया गया है संक्षिप्त में यह पुस्तक प्रत्येक जैन बन्धु एवं अन्य धर्मावलम्बी के लिए अवश्य पठनीय है।
- इस कृति में लेखक ने १०६ ग्रन्थों/पुस्तकों के संदर्भ देकर प्रामाणिक दस्तावेज प्रस्तुत कर दिया है।

28

प्राचीन संस्कृत सूत्र ग्रन्थ
तत्त्वार्थसूत्र

- आचार्य उमास्वामी विरचित तत्त्वार्थसूत्र एक ऐसी कालजयी अपूर्व कृति है, जिसमें निहित संदेश सर्वजन हिताय और सार्वकालिक उपादेयता की भावना से परिपूर्ण है।
- वर्तमान में इस ग्रन्थ को जैन परम्परा में वही स्थान प्राप्त है, जो हिन्दू धर्म में भगवद्गीता को, इस्लाम में कुरान को, ईसाई में बाइबिल को प्राप्त है। यह ग्रन्थ समग्र जैन दर्शन में अत्यन्त सम्मानित हुआ है।
- जैन सिद्धान्तों को संस्कृत भाषा में प्रकट करने वाला यह पहला सूत्र ग्रन्थ माना जाता है। इसमें १० अध्याय एवं ३५७ सूत्र हैं।

- १८०० वर्ष पूर्व रचित इस ग्रन्थ में सांसारिक दु:खों से मुक्ति प्राप्त करने का सहज मार्ग दर्शाया गया है।
- इस ग्रन्थ में साम्प्रदायिकता नहीं है। विशाल आगम साहित्य का सार बड़ी कुशलता से ग्रंथित किया गया है। इसमें चारों अनुयोगों का समावेश है।
- श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही सम्प्रदायों को थोड़े से पाठभेद को छोड़कर समान रूप से प्रिय है।
- जैन जीव विज्ञान, जैन भौतिक विज्ञान, जैन रासायनिक विज्ञान, जैन विश्व संरचना, सांसारिक सुख दु:ख का कारण, कर्मबन्ध और उनसे छूटने का उपाय, व्यवहारिक जीवन जीने की कला, आपसी प्रेम, कर्त्तव्य पालन का संदेश, आर्थिक विषमता को दूर करने का उपाय इत्यादि अनेक बातों का सारगर्भित व्याख्यान गागर में सागर के समान इस ग्रन्थ में उपलब्ध है।
- इस ग्रन्थ की सर्वाधिक टीकाएँ लिखी गयी हैं। आचार्य पूज्यपाद ने सर्वार्द्धसिद्धि, आचार्य अकलंक ने राजवार्तिक और आचार्य विद्यानंदजी ने श्लोकवार्तिक दार्शनिक टीकाएँ लिखकर इस ग्रन्थ का महत्त्व व्यक्त किया है।
- उमास्वामी द्वारा प्रतिपादित जीवन शैली को जीवन में अपना कर वर्तमान जीवन की समस्त विसंगतियों एवं विषमताओं का निवारण किया जा सकता है।

29 भारत का प्रतिनिधि नीतिग्रन्थ कुरल काव्य

- सर्वाधिक समादृत नीतिग्रन्थ की रचना आज से लगभग २००० वर्ष पूर्व सुदूर दक्षिण में तमिलनाडु प्रान्त के वन्य प्रदेश में रहकर एक अनासक्त योगी ने की थी, जिनका नाम है तिरुवल्लुवर। इसमें १०८ परिच्छेद हैं, प्रत्येक में १० श्लोक हैं। कुल १०८० श्लोक हैं। इसका हिन्दी एवं संस्कृत अनुवाद ५० वर्ष पूर्व महरौनी जिला-ललितपुर निवासी पं० गोविन्दराय जैन शास्त्री ने किया था।
- मूलतः तमिल भाषा में रचित इस ग्रन्थ को तमिलनाडु की सम्पूर्ण जनता जाति-पंथ-सम्प्रदाय आदि के भेदों को भुलाकर समान रूप 'तामिलवेद', 'पंचम वेद', 'ईश्वरीय ग्रन्थ', 'महान् सत्य' तथा 'सर्वदेशीय वेद' सदृश नामों से अत्यन्त आदर पूर्वक स्मरण करती है।
- संभवतः वहाँ के वैदिकों को वेदों की ऋचायें, मुसलमानों को कुरान-शरीफ की आयतें, ईसाईयों को पवित्र वाइबिल की पंक्तियाँ, जैनों को आगमग्रंथों के गाथासूत्र एवं अन्य मतावलम्बियों के अपने-अपने मूल धर्मग्रन्थों के सन्देश वाक्य इतने याद नहीं होंगे, जितने कुरलकाव्य के नीतिपरक पद्य याद हैं।
- भूतपूर्व राष्ट्रपति ए. पी. जे. अब्दुल कलाम ने कहा है—संत तिरुवल्लुवर ने किसी राज्य, देश, भाषा या धर्म की बात न करके, समग्र विश्व के मानव कल्याण हेतु प्रेरणास्पद सूत्र दिए हैं। उनके विशद ज्ञान व बौद्धिक क्षमताओं से मैं अभिभूत हूँ।
- वहाँ किसी माँ ने संभवतः इतनी लोरियाँ नहीं गायी होंगी, जितनी बार इसके छन्दों को गुनगुनाया होगा। यहाँ तक कि वहाँ के निवासी परम नास्तिक व्यक्ति भी इस ग्रन्थ में पूर्ण आस्था रखते हैं। अनपढ़, अंगूठाटेक व्यक्तियों एवं ग्राम्य महिलाओं-बच्चों से भी इसके पद्यों को सुना जा सकता है।
- २००० वर्षों की दीर्घावधि में इस अत्यन्त आदृत कुरलकाव्य की यशः रश्मियों का प्रचार तमिलनाडु की सीमाओं को लाँघकर सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त हो चुका है तथा विश्वभर में लगभग ८० भाषाओं में इसका अनुवाद होकर सहस्रों संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं।
- कुरलकाव्य का आद्योपांत अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि यह जैन ग्रन्थ है। इसके कर्ता जैन संत हो सकते हैं।

30

दिगम्बर जैन मत के इतिहास और साहित्य
विषयक परम्परागत विश्वास का रक्षक ग्रन्थ

जैन परम्परा और यापनीय संघ

- पं० (डॉ०) सागरमल जैन की पुस्तक 'जैनधर्म का यापनीय सम्प्रदाय' नामक कृति में वर्णित पूर्वाग्राही एवं तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत किए गए तथ्यों से उत्पन्न भ्रामक स्थिति को दृष्टि में रखकर आगम एवं अन्य विविध प्रमाणों के आलोक में आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के आशीर्वाद एवं प्रेरणा से १९९८ से २००९ तक की लम्बी अवधि में इस ग्रन्थ की रचना जैन समाज के वरिष्ठ, गरिमा मंडित विद्वत् रत्न प्रो० (डॉ०) रतनचन्द्रजी जैन, भोपाल (मध्यप्रदेश) द्वारा की गई।
- संत शिरोमणि परम पूज्य आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज एवं मुनि श्री अभयसागरजी महाराज ने ग्रन्थ प्रकाशन के पूर्व ही पाण्डुलिपि का वाचन सुनकर लेखक को संतोष एवं उत्साहित आशीर्वाद प्रदान किया था। आचार्य श्री कहते हैं कि—अब इन ग्रंथों का विरोध लिखने में १०० वर्ष लग जायेंगे।
- दिगम्बर जैन परम्परा के इतिहास और साहित्य विषयक परम्परागत विश्वास को श्वेताम्बर सम्प्रदाय द्वारा विचलित करने की कोशिश की गई है। इन तीन खण्डों से पंडितजी ने उस विश्वास की रक्षा अनेक प्रमाणों से की है।
- तीन खण्डों में विभाजित लगभग २६०० पृष्ठों के 'जैन परम्परा और यापनीय संघ' नामक इस विशाल ग्रन्थ में मूल संघ और उनकी प्राचीनता के पूर्व प्रमाणों को प्रस्तुत करते हुए विभिन्न तथ्यों एवं विवेचन से अनेक भ्रान्तियों का निवारण किया गया है तथा हमारे आचार्यों एवं उनके साहित्य के बारे में यथार्थ जानकारी इन ग्रन्थों में पढ़ने को मिलती है।
- प्रस्तुत ग्रन्थ में जैन संघों के इतिहास, साहित्य, सिद्धान्त और आचार की गवेषणा की गई है। ऐतिहासिक, दार्शनिक, साहित्यिक एवं तात्त्विक दृष्टियों से इसमें प्रतिपादित तथ्य अत्यन्त उपयोगी हैं।
- इन ग्रन्थों को प्रकाशित करवाने का श्रेय आर० के० मार्बल्स ग्रुप किशनगढ़-मदनगंज ने प्राप्त किया है।

31 सबसे बड़ी पद्मासन प्रतिमा

- गोपाचल (ग्वालियर) जैन इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं कला का प्रधान केन्द्र रहा है। गोपाचल मूर्तिकला, उसकी विशालता, कला वैभव, साहित्य एवं इतिहास के कारण संगम तीर्थ है।
- गोपाचल सदैव से ही तीर्थ रहा है, क्योंकि यहाँ तीर्थंकरों का आगमन हुआ है।
- सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य एवं उनके गुरु श्रुतकेवली भद्रबाहु यहाँ पधारे थे तथा मल्लिभूषण ने यहाँ की वंदना की थी।
- इस क्षेत्र से सुप्रतिष्ठित केवली का मोक्ष होने के कारण यह निर्वाण भूमि भी है। यही कारण है कि आचार्य पूज्यपाद की निर्वाण भक्ति के पश्चात् अनेक तीर्थ वंदनाओं में गोपाचल तीर्थक्षेत्र का वर्णन है।
- अपभ्रंश भाषा के महाकवि रइधू ने गोपाचल को पण्डितों का गुरु, गोपाचल दुर्ग को स्वर्ग गुरु कहा है। यहाँ पर अनेक कवि एवं विद्वानों ने अनेक ग्रन्थों की रचनायें की हैं।
- यहाँ पर कुल २६ जैन गुफाएँ निर्मित हैं। एक पत्थर की बावड़ी विशेष पूजनीय है। सिद्धपीठ के ऊपर की गुफा में अनेक जैन प्रतिमाएँ सुरक्षित हैं।

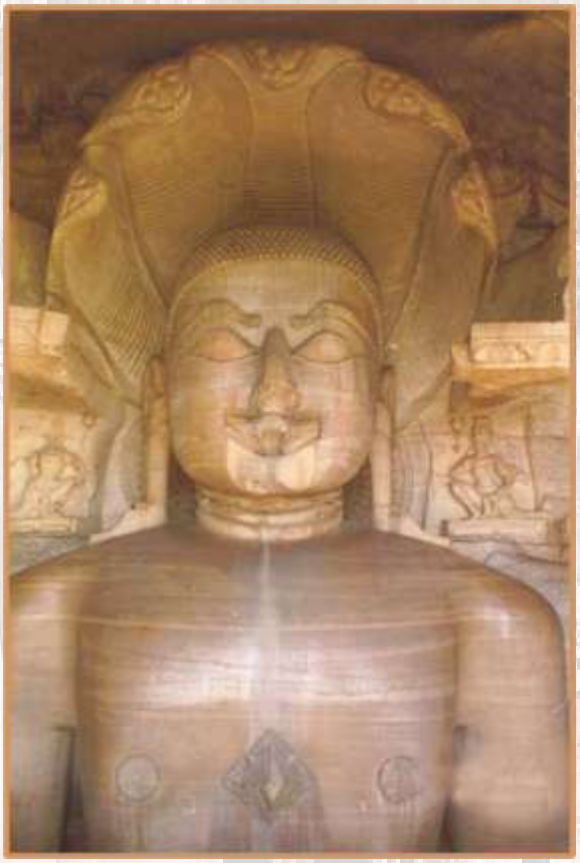

२३ वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ भगवान्
गोपाचल पर्वत, ग्वालियर

- भगवान् पार्श्वनाथ की ४२ फुट उत्तुंग एवं ३० फुट चौड़ी संसार में सर्वाधिक विशाल पद्मासन प्रतिमा इस तीर्थ का प्राण-परिचय है जो नित्य दर्शनीय है।
- यहाँ प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ल १३, कार्तिक अमावस्या, पौष कृष्ण ११, मोक्ष सप्तमी एवं क्वार वदी ४ की तिथियों में मेले का आयोजन किया जाता है।

32 हमारी धरोहर : जैन पाण्डुलिपियाँ

- हमारी विरासत का एक महत्त्वपूर्ण अंश पाण्डुलिपियाँ हैं, जो जीवन की शैली, धार्मिक भावना सांस्कृतिक सभ्यता और ऐतिहासिक शृंखला का परिचय देती हैं। पाण्डुलिपियों में भारतीय संस्कृति की जानकारी ही नहीं अपितु विश्व के सर्वश्रेष्ठ ज्ञान-विज्ञान, कर्मसिद्धान्त, अध्यात्म, सिद्धान्त, आयुर्वेद, ज्योतिष आदि विषयक जानकारी प्राप्त होती है। ग्रन्थों के सम्पादन एवं पाठ भेदों के मिलान करने में पाण्डुलिपियों की महती भूमिका है।
- ग्रन्थों के अंत में जो प्रशस्तियाँ हैं, उनसे तत्कालीन शासकों की परम्परा, आचार्य परम्परा, तत्कालीन रीति-रिवाज, समाज की व्यवस्था आदि से सम्बन्धित जानकारी उपलब्ध होती है। अतः समाज के इतिहास को तैयार करने में प्रशस्तियाँ महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।
- विगत शताब्दियों में साम्प्रदायिक विद्वेष एवं जातीय उन्माद के कारण लाखों पाण्डुलिपियों की होलियाँ जलायीं गईं। हजारों-लाखों पाण्डुलिपियाँ आज भी विदेशी पुस्तकालयों में उपलब्ध हैं।
- इन सबके बाद भी हजारों नहीं लाखों की संख्या में जैन पाण्डुलिपियाँ भारत वर्ष के जैन शास्त्र भण्डारों, जिनालयों एवं व्यक्तिगत पुस्तकालयों में मौजूद हैं।
- एक ही पाण्डुलिपि की कई प्रतिलिपियाँ करवाकर विद्वानों एवं स्वाध्यायियों को अध्ययनार्थ उपलब्ध कराई जाती थीं। इस तरह एक ही पाण्डुलिपि की प्रतियाँ विभिन्न स्थानों पर प्राप्त हो जाती हैं। विभिन्न पाण्डुलिपि संग्रहालय इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं।
- हमें गौरव है कि हमारे पूर्वजों ने इन संग्रहालयों की सुरक्षा करके संस्कृति के संरक्षण में जो योगदान दिया है, वह अपूर्व है और भावी पीढ़ी के लिए एक उदाहरण है। इन संग्रहालयों में प्राकृत, अपभ्रंश, संस्कृत, राजस्थानी, हिन्दी, मराठी, कन्नड़ी आदि विभिन्न भाषाओं में लिखित विभिन्न विषयों की पाण्डुलिपियाँ संगृहीत हैं।
- भारत तथा विदेशों में उपलब्ध कुल पाण्डुलिपियों में से ४० प्रतिशत पाण्डुलिपियाँ जैन परम्परा एवं प्राकृत भाषा से सम्बन्धित हैं। इनमें भी गुजरात तथा राजस्थान में सर्वाधिक पाण्डुलिपियाँ हैं।

33 प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान

बासोकुंड (वैशाली), मुजफ्फरपुर (बिहार)

- प्राकृत एवं जैनशास्त्रों के अध्ययन और शोधकार्य हेतु साहू शान्तिप्रसाद जैन एवं स्थानीय लोगों के सहयोग से बिहार सरकार ने सन् १९५५ ई॰ में वैशाली नगर में 'प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान' की स्थापना की थी।
- संस्थान भवन की आधारशिला भारत के प्रथम महामहिम राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्रप्रसादजी ने रखी थी, जो भगवान् महावीर की जन्मभूमि पर नितान्त शान्त एवं सुरम्य वातावरण में अवस्थित है।
- 'प्राकृत और जैनशास्त्र' में स्नातकोत्तर अध्ययन-अध्यापन एवं डी॰ लिट्॰ तथा पी-एच॰ डी॰ उपाधि के लिए शोधकार्य अद्यावधि अनवरत चल रहा है। शोधार्थियों के उपयोग हेतु इस समृद्ध पुस्तकालय में लगभग १८००० महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ संग्रहीत हैं।
- यहाँ से उपाधिलब्ध विद्वान् देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों, प्रशासकीय सेवाओं तथा अन्य क्षेत्रों में अपनी सेवायें देकर संस्थान का गौरव बढ़ा रहे हैं।
- संस्थान से अब तक १०२ ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमें 'वैशाली इन्स्टीट्यूट रिसर्च बुलेटिन' के नाम से संस्थान की प्रकाशित शोध पत्रिका के २७ अंक शामिल हैं।
- संस्थान के चार परास्नातक विद्वान् राष्ट्रपति पुरस्कार से अलंकृत हो चुके हैं।

34

जीवदया का अग्रणी संस्थान
दयोदय महासंघ, भोपाल

गाय देश का धर्मशास्त्र है, कृषिशास्त्र है, अर्थशास्त्र है, नीतिशास्त्र है
उद्योगशास्त्र है, समाजशास्त्र है, विज्ञानशास्त्र है, आरोग्यशास्त्र है
पर्यावरण शास्त्र है, अध्यात्म शास्त्र है।

- जीवदया के प्रणेता श्रमण शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के आशीर्वाद से गौशालाओं के संचालन हेतु शताधिक गौशाला का समूह दयोदय महासंघ की स्थापना २२ अप्रैल, २००२ में की गई।
- जैनदर्शन के ग्रन्थों में गाय की महिमा बतलायी गयी है—यः श्रीः सः गौ अर्थात् धरा पर गाय ही साक्षात् लक्ष्मी है। हिन्दू पुराणों के अनुसार गाय के शरीर में ३३ करोड़ देवी-देवताओं का वास होता है।
- आहार, आवास, औषधि, जल की समुचित व्यवस्था हेतु अहिंसा प्रेमी जैन समाज द्वारा प्रतिदिन १० लाख रुपया इनके भरण-पोषण में खर्च किया जाता है।
- दयोदय महासंघ का उद्देश्य—बेसहारा, बूढ़े, अपंग, चोटग्रस्त, कसाइयों से छुड़ाये गए गौवंश का गौशालाओं में संरक्षण एवं संवर्द्धन करना, आश्रय स्थल में भूसा भंडार करना, गौशालाओं में औषधीय वृक्ष लगाना, जैविक खाद तैयार करना, गौमूत्र से दवाइयों का निर्माण करना, प्रशिक्षण-अनुसंधान एवं विकास की व्यवस्था करना। गौशाला के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने वाले को प्रतिवर्ष दयोदय अहिंसा रत्न से सम्मानित करना।
- आर्थिक एवं कानूनी सहायता प्राप्त कर कसाइयों से मुक्त कराकर, पशुओं को गौशालाओं में आश्रय देना एवं उनकी सेवा को पूरी करना।
- युवाओं को गौवंशों, हमारी संस्कृति, जैविक उत्पाद, जैविक खेती से जोड़ना। जैविक, गौमूत्र उत्पाद, गोबर गैस, गोबर उत्पाद और अगरबत्ती, गैसोलीन, साबुन के निर्माण को प्रोत्साहित करना।
- मांस निर्यात एवं बूचड़खानों का जनजागृति से विरोध एवं विधियक कार्यवाही करना एवं जल संरक्षण, पर्यावरण संरक्षण के प्रति कार्य करना।

आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज का अहिंसक समाज को संदेश—"मूक निरीह प्राणियों पर अत्याचार रोकने का सामूहिक प्रयास करें। इन पशुओं पर अत्याचार के कारण ही प्राकृतिक आपदायें आती हैं, क्योंकि निरीह पशुओं की पीड़ा से प्रकृति भी द्रवित हो जाती है। अतः मूक पशुओं की रक्षा का संकल्प लेकर जीवदया के क्षेत्र में कार्य करें। गाय बैलों को कत्लखाने जाने से रोकने का प्रयास करें। पशु हमारे परिवार के अंग हैं। उनकी रक्षा करना हमारा परम कर्त्तव्य है।"

35 ज्ञानतीर्थ : अनेकान्त ज्ञान मंदिर

श्रुतधाम, बीना (मध्यप्रदेश)

- मध्यप्रदेश के बीना जंक्शन में परमपूज्य श्रमण शिरोमणि श्री १०८ विद्यासागरजी महाराज के मंगल आशीर्वाद तथा परम पूज्य मुनि श्री १०८ सरलसागरजी महाराज के पुनीत सान्निध्य में ब्र॰ संदीपजी 'सरल' के अथक मार्गदर्शन एवं प्रयासों से २० फरवरी, १९९२ को संस्थान का बीजारोपण किया गया।
- संस्थान जैन संस्कृति की अमूल्य धरोहर के संरक्षण सम्वर्द्धन व प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित है।
- संस्थान द्वारा शास्त्र संरक्षण का कार्य जारी है, जिसमें दुर्लभ, ऐतिहासिक, कलात्मक महत्त्वपूर्ण २०,००० पाण्डुलिपियाँ, शताधिक ताड़पत्रीय दुर्लभ ग्रन्थ, अनेक दुर्लभ सचित्र पाण्डुलिपियाँ संग्रह के अलावा १२,००० मुद्रित ग्रन्थ शोधार्थियों एवं स्वाध्यायार्थियों के लिए सुलभ हैं।
- दुर्लभ विशिष्ट पाण्डुलिपियों को कम्प्यूटराइजेशन करने के साथ-साथ संरक्षण हेतु वैज्ञानिक रासायनिक प्रयोगशाला स्थापित की गई है।
- इस संस्थान से ३० विशिष्ट ग्रन्थों के प्रकाशन के साथ-साथ त्रैमासिक शोध पत्रिका 'अनेकान्त दर्पण' तथा 'घर-घर चर्चा रहे धर्म की' मासिक पत्र की अभिनव प्रस्तुति की जा रही है।
- सदाचारी सद्गृहस्थ एवं व्रतीवर्ग हेतु श्रुतधाम में अनेकान्त प्रज्ञाश्रम की स्थापना की गई है। जिसमें रत्नत्रय की आराधना-साधना हेतु संसाधन सुलभ हैं।
- श्रुतधाम, बीना के प्रशस्त आध्यात्मिक शांत वातावरण में अतिमनोज्ञ सौम्य वीतराग मुद्रा युक्त आदिनाथ भगवान् की उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा दर्शनार्थियों के लिए आकर्षण का केन्द्र है।

36

विश्वस्तरीय शिक्षण का अद्वितीय संस्थान

तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय

मुरादाबाद (उत्तरप्रदेश)

भगवान् महावीर के जन्म के समय तक्षशिला नालंदा विश्वविद्यालय से भारत की पहचान होती थी परन्तु समय के साथ-साथ सब लुप्त होती चली गई। वर्तमान में भगवान् महावीर के जन्म के बाद ''तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद'' की स्थापना अपने आप में एक ऐतिहासिक कदम है। इस संस्थान के प्रथम कुलाधिपति एवं संस्थापक श्री सुरेश जैन हैं, जिन्होंने अपनी चंचला लक्ष्मी का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में करके महान् कार्य किया है। इसकी स्थापना ने जैन समुदाय को राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर गौरवान्वित किया है।

- अज्ञानता, अस्वस्थता तथा बेरोजगारी जैसी सामाजिक विषमताओं को दूर करने के लिए सन् २००१ में भगवान् महावीरस्वामी के नाम पर तीर्थंकर महावीर इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट एंड टैक्नोलॉजी की नींव रखी गई।
- यह विश्वविद्यालय २००८ में एक छोटे से पौधे के रूप में रोपित हुआ था, अब यह १४० एकड़ में भूमि में एक विशाल वटवृक्ष के रूप में अनेक संभावनाओं को संजोए १०० महाविद्यालयों को सफलतापूर्वक संचालित कर रहा है।
- २०१६ में राष्ट्र के सर्वोत्तम १०० निजी विश्वविद्यालयों में इस संस्थान को सम्मिलित किया गया है। आगामी समय में विश्व के सर्वश्रेष्ठ २०० विश्वविद्यालयों में टी॰ एम॰ यू॰ की गणना होगी। तभी संस्थापक श्री सुरेश जैन का सपना साकार होगा।
- सेंटर फॉर जैन स्टडीज की भी स्थापना की गई है जिसमें जैनदर्शन पर शोध कराया जाता है।

- इस विश्वविद्यालय से अब तक विभिन्न विषयों में अनेक पी-एच॰ डी॰ हो चुकी हैं।
- यहाँ देश-विदेशों के १४००० से अधिक विद्यार्थी, विश्वस्तरीय उच्च-शिक्षा के ९०० से अधिक अनुभवी शिक्षकों के संरक्षण में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।
- विश्वविद्यालय के स्वच्छ वातावरण में ४६०० छात्र-छात्राओं के रहने हेतु सुविधाजनक छात्रावासों की व्यवस्था है और जैनधर्मानुसार भोजन की व्यवस्था है।
- १००० शय्याओं का मल्टी एवं सुपर स्पेशियलिटी अस्पताल, विभिन्न प्रकार के खेल मैदान, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का इंडोर स्टेडियम, ऑडिटोरियम तथा व्यायामशाला की सुविधा भी उपलब्ध है।
- इस विश्वविद्यालय का गौरव यह भी है कि विगत चार वर्षों में विश्वविद्यालय द्वारा १४०० से अधिक जैन छात्र-छात्राओं को ३८ करोड़ से अधिक की छात्रवृत्ति दी जा चुकी है।
- इस विश्वविद्यालय में अधिकांश पाठ्यक्रमों में शिक्षण शुल्क में ५० प्रतिशत तथा छात्रावास शुल्क में २५ प्रतिशत छूट का प्रावधान है।
- जैन विद्यार्थियों हेतु परिसर में महावीर जिनालय स्थित है। जिसमें लगभग १४०० जैन छात्र-छात्राएँ प्रतिदिन जिन-दर्शन एवं पूजा-अर्चना तथा आरती में अपनी सहभागिता करते हैं। पर्युषण महापर्व के दस दिनों में पूजन, विधान, धार्मिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों में जैन विद्यार्थी बड़े उत्साह के साथ भाग लेते हैं।
- जिनालय परिसर में समय-समय पर जैन साधुओं का पदार्पण होता है। जिससे विद्यार्थियों को नैतिक एवं धार्मिक संस्कार प्राप्त होते हैं।
- समस्त जैन समाज के लिए यह अत्यन्त हर्ष, गौरव एवं सम्मान का विषय है कि तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय की स्थापना एवं विस्तार में बैंक के अतिरिक्त किसी भी वित्तीय संस्थान, राजकीय एवं केन्द्रीय सरकारी अथवा व्यक्तिगत अनुदान का किसी भी प्रकार का योगदान नहीं है।
- विश्वविद्यालय को अनेक पुरस्कारों से नवाजा गया है जिसमें वर्ष २०१२ में राजीव गाँधी श्रेष्ठता पुरस्कार, CIDC द्वारा २०१३ एवं २०१४ में शिक्षा क्षेत्र में योगदान के लिए विभिन्न ट्राफीज से सम्मानित किया गया।

प्रथम कुलाधिपति एवं संस्थापक श्री सुरेश जैन कहते हैं—
जिस प्रकार अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से मुस्लिमों की पहचान एवं बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से हिन्दुओं की पहचान होती है ठीक उसी प्रकार 'तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय' से जैनियों की पहचान अंकित होती है। सम्पूर्ण जैन समुदाय इस पर गर्व करता है। तीर्थंकर महावीर के नाम से जुड़ा यह विश्वविद्यालय शिक्षा के साथ-साथ जैन संस्कृति के प्रचार-प्रसार एवं जैन छात्र-छात्राओं के पठन पाठन के लिए अपने अभूतपूर्व योगदान हेतु जैन इतिहास के पृष्ठों पर सदैव एक धरोहर के रूप में जाना जायेगा।

37 दानवीर : सेठ माणिकचन्द जौहरी

(१८५१-१९१४ ई.)

- सेठ माणिकचन्द जी का जन्म १८५१ में धनतेरस के दिन सूरत में हीराचन्दजी के यहाँ हुआ था। बचपन से ही माणिकचन्दजी की धर्म में गहरी आस्था थी। आपमें एक बहुत बड़ा गुण था कि जिस काम में दिल लगाते तो उसमें बिल्कुल लवलीन हो जाते थे।
- माणिकचन्दजी ने बचपन में ही पद्मपुराण, रत्नकरण्डक श्रावकाचार का स्वाध्याय कर लिया। वे सत्यवादी, न्यायप्रिय, उद्योगशील थे। कठिन परिश्रम से उन्होंने अपने भाईयों के सहयोग से बम्बई में जवाहरात का व्यापार प्रारम्भ किया। सत्यवादिता के कारण व्यापार में कुछ ही समय में अधिक प्रसिद्धि फैल गई।
- अपने समय के महान् संस्कृति-संरक्षक, समाज-सुधारक, विद्या-प्रचारक, उदार, दानवीर और धर्मिष्ठ थे। उन्होंने समाज में जागृति उत्पन्न करने के लिए पूरे देश का भ्रमण किया। स्थान-स्थान में स्वयं आर्थिक सहयोग और प्रेरणा देकर जैन छात्रावास स्थापित कराए। अनेक छात्रवृत्तियाँ भी प्रदान कीं।
- बम्बई प्रान्तिक महासभा, माणिकचन्द्र-परीक्षालय, माणिकचन्द्र जैन-ग्रन्थमाला, साप्ताहिक जैनमित्र आदि की स्थापना की। सेठजी के प्रयासों से २२ अक्टूबर, १९०२ में भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी की स्थापना हुई और आपने महामंत्री का पद संभाला।
- आपने तीर्थों के उद्धार एवं संरक्षण में भी योगदान दिया, मंदिर और धर्मशालाएँ भी बनवाईं, समाज की कुरीतियों को दूर करने के लिए अभियान चलवाए, जिनवाणी के उद्धार के प्रयत्न किए, अनेक विद्वानों को प्रश्रय दिया। तीर्थराज सम्मेदशिखर की सुरक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।
- सेठजी को अंग्रेज सरकार ने जस्टिस ऑफ दी पीस (जे. पी.) अर्थात् शांति के न्यायाधीश की पदवी दी। इस पद से नगर में मजिस्ट्रेट जैसा हक हो जाता है। जिस कागज पर हस्ताक्षर कर दें तो फिर अन्य मजिस्ट्रेट या रजिस्ट्रार से हस्ताक्षर कराने की आवश्यकता नहीं होती है।
- सेठजी का जीवन भारतवर्ष के धनपात्रों के लिए अतिशय अनुकरणीय है। सेठजी सार्वजनिक संस्थाओं में दान करते रहते थे। स्व. पण्डित नाथूराम प्रेमी के शब्दों में - भारत के आकाश से चमकता हुआ तारा टूट पड़ा। जैनियों के हाथ से चिन्तामणि रत्न खो गया। समाज मंदिर का एक सुदृढ़ स्तम्भ गिर गया। यह वास्तव में उस काल के युग-प्रवर्तक जैन महापुरुष थे।

38

वन्दनीय व्यक्तित्व

पं. माणिकचंद्रजी कौन्देय

(१८८६-१९७०)

- पं. माणिकचंद्रजी कौन्देय का जन्म ग्राम चावली (आगरा) उत्तरप्रदेश में पिता लाला हेत सिंहजी, माता श्रीमति झल्लाबाई जी के यहाँ हुआ।
- आपको न्यायाचार्य, तर्करत्न, न्यायदिवाकर, सिद्धान्त महोदधि, स्याद्वाद वारिधि, दार्शनिक शिरोमणि, विद्वत् सम्राट्, प्रवचन चक्रवर्ती, सिद्धान्त भास्कर, न्यायरत्न की उपाधियाँ प्रदान की गईं। आप न्यायशास्त्र में निष्णात विद्वान् थे।
- आपने दिल्ली, पानीपत, अजमेर, भिवानी आदि स्थानों पर आर्य समाज के विद्वानों से शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त करके जैनधर्म की विजय-पताका फहराई।
- बीसवीं शताब्दी में जैन भारती के भण्डार को अप्रतिम समृद्धि दिलाने वाले जो अनेक शुभ संयोग जुटे हैं। उनमें दो घटनाएँ प्रधान हैं—

  प्रथम—लगभग २००० वर्ष पूर्व वीरसेन स्वामी द्वारा रचित श्री धवल ग्रन्थों की प्रतिलिपि कराकर उनका हिन्दी में अनुवाद और प्रकाशन होना पहली गौरवपूर्ण घटना है। यह कार्य कुशल विद्वानों के सक्षम समुदाय ने सम्पन्न किया।

  दूसरी—लगभग ११०० वर्ष पूर्व श्री विद्यानंदि स्वामी द्वारा रचित तत्त्वार्थों का विशद-विस्तृत वर्णन करने वाले संस्कृत तत्त्वार्थ श्लोकवार्तिक जैसे महान् ग्रन्थ का हिन्दी महाभाष्य, तत्त्वार्थ चिन्तामणि का लेखन सवा लाख श्लोक प्रमाण महाभाष्य, तत्त्वार्थ चिन्तामणि की श्रमसाध्य रचना का दुसह कार्य एक अकेले मनीषी पं. माणिकचन्द्रजी कौन्देय ने सम्पन्न किया। जिन्होंने १५ वर्ष अहोरात्र परिश्रम करके यह महान् कार्य पूरा किया। यहबड़ी विद्वत्ता, दृढ़ साहस एवं धैर्य का काम था।
- पण्डित माणिकचन्द्रजी कौन्देय की असीम विद्वत्ता केवल जैनदर्शन या न्याय तक ही सीमित नहीं थी। हिन्दी में उनका मौलिक लेखन भी इतना विविध, ऐसा आगमानुसारी और इतना सुगम है जो सहज ही उन्हें समय के श्रेष्ठ रचनाकारों की अंग्रिम पंक्ति में बिठाता है।

39

समाज सेविका
महिला रत्न पंडिता चंदाबाईजी

- माँ श्री चंदाबाईजी का जन्म १८९० में वृंदावन में हुआ था। बारह वर्ष की आयु में आपका विवाह आरानगर के संभ्रान्त प्रसिद्ध जमींदार जैन धर्मानुयायी धर्मकुमारजी के साथ हुआ। विवाह के कुछ समय बाद बाबू धर्मकुमारजी की मृत्यु हो गई। १३ वर्ष में ही वैधव्य दशा आपकी चिरसंगिनी बनी।
- आपके जेठ देव प्रतिमा स्वनामधन्य बाबू देवकुमारजी ने अपनी अनुज वधू को विदुषी, समाजसेविका और साहित्यकार बनाने में कोई कमी नहीं रखी। आपने घोर परिश्रम कर संस्कृत व्याकरण, न्याय, साहित्य, जैनागम एवं प्राकृत भाषा में अगाध पांडित्य प्राप्त किया और राजकीय संस्कृत विद्यालय काशी की पंडिता परीक्षा उत्तीर्ण की, जो वर्तमान में शास्त्री शिक्षा के समकक्ष है।
- आपने सन् १९०९ में भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महिला परिषद् की स्थापना कर नारी जागरण का मंत्र फूँका तथा नारी के सर्वांगीण विकास के लिए ब्र. श्री देवकुमारजी द्वारा आरा नगर में एक कन्या पाठशाला की स्थापना कराई और स्वयं उसकी संचालिका बन नारी शिक्षा का बीज बोया।
- आपने १९१९ में नारी शिक्षा के प्रसार के निमित्त श्री जैन बाला विश्राम नाम की शिक्षा संस्था स्थापित की। इस संस्था में लौकिक एवं नैतिक शिक्षा का पूरा प्रबंध किया। विद्यालय के साथ छात्रावास की भी व्यवस्था की गई। इस संस्था में अपना तन-मन-धन सब कुछ दिया था। आपकी तपस्या छात्राओं को स्वतः आदर्श बनने की प्रेरणा देती थी।
- माँश्री की सेवा, त्याग और लगन का मूल्य नहीं आंका जा सकता। इस संस्था में भारत के कोने-कोने से आकर बालायें शिक्षा प्राप्त करती हैं। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद, जयप्रकाश नारायण, संत विनोबाभावे एवं काका कालेलकर आदि मनीषियों ने भी इस संस्था की महत्ता को स्वीकार किया है।
- आपकी लगभग १५ रचनायें प्रकाशित हुईं। सन् १९३५ से जैन महिलादर्श नामक हिन्दी मासिक पत्रिका का सम्पादन भी करती रहीं। राजगृह, पावापुरी, आरा आदि स्थानों में विपुल धनराशि व्यय कर नयनाभिराम जैन मंदिरों का निर्माण कराया। वृंदावन में भी एक जिनालय आपके द्वारा निर्मित है। आपके द्वारा मूर्तियों का निर्माण एवं उनकी प्रतिष्ठाएँ भी करवायी गई।
- चंदाबाईजी ने आर्यिका विजयमती माता जी के सान्निध्य में २८ जुलाई, १९७७ में आर्यिका चन्द्रमती बनकर सल्लेखना पूर्वक समाधि-मरण कर अपनी आत्मा का उत्थान किया।

40

जैन जगत् के गौरव
पं० रतनलाल जैन

- पं० रतनलालजी का जन्म १९३४ में बिनौता (चित्तौड़गढ़) के श्रावक श्रेष्ठी श्री सुखलालजी एवं श्रीमति गमेदी बाई के यहाँ हुआ।
- लौकिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा श्री पार्श्वनाथ विद्यालय, उदयपुर से प्राप्त की। जन्म से ही माता-पिता के धार्मिक संस्कारों की शिक्षा गुरु पं. मनोरंजनदासजी ने पल्लवित एवं पुष्पित की।
- स्वाध्याय एवं धर्माचरण की प्यास आपको श्रमण शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के पास ले आयी।
- आचार्य श्री के आशीर्वाद से आपने स्वाध्याय एवं शिक्षण का कार्य निस्पृह भाव से आरम्भ किया, जिसका सुफल है कि आपसे अध्ययन किए आज कई महाव्रती, आर्यिकाएँ, व्रती एवं सद् श्रावक गृहस्थ हैं।
- आपकी विनय, सरलता, सहजता, जिनवाणी के प्रति श्रद्धा, गुरुओं के प्रति अनन्य समर्पण आपके चारित्र की विशेषताएँ हैं।
- आज भी अनेक ब्रह्मचारी भैया-बहिनें आपसे स्वाध्याय पाने सुदूर प्रांतों से आकर धन्य-धन्य होते हैं।
- आप करणानुयोग के शीर्षस्थ विद्वान् हैं, जिनवाणी के गूढ़ रहस्यों को सरल उदाहरणों से हृदयंगम कराने में आप सिद्धहस्त हैं।
- आपकी कृतियाँ आगम की छाँव में, जैनकर्म अनुचिन्तन, मंगलाचरण, पद्मपुराण में आध्यात्मिक सूक्तियाँ जन-जन के स्वाध्याय का आधार हैं।
- आपने अपने जीवन को संयम साधना से शृंगारित कर आचार्यश्री से दो प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर मोक्षपथ प्रशस्त किया। ख्याति लाभ से परे आप निष्काम साधक के रूप में साधनारत हैं।

41

उदयपुर का बहादुर बेटा, जांबाज अमरशहीद

अर्चित वार्डिया (जैन)

- अर्चित वार्डिया का जन्म झीलों की नगरी उदयपुर में २० जनवरी, १९८८ को हुआ था। आप बहुत धार्मिक परिवार से थे। श्वेताम्बर परम्परा के आचार्य देवेन्द्र मुनि के भतीजे थे।
- अर्चित अपनी माँ वीना वार्डिया, बहिन दिव्यांशी के साथ रहते थे। पिताजी का अवसान पहले ही हो चुका था।
- अपने पिता श्री दिनेश वार्डिया के स्वप्न को पूरा करने के लिए बी॰ काम॰ की पढ़ाई के बाद आपने भारतीय सेना में मार्च २०१० में प्रवेश लिया।
- सेना प्रवेश से पहले एन॰ डी॰ ए॰ की परीक्षा में पूरे भारत में ९वाँ स्थान प्राप्त किया था। एक साल की ट्रेनिंग के लिए चेन्नई गये, ट्रेनिंग के पूरा होते ही जम्मू-कश्मीर में लेफ्टिनेंट पद पर नियुक्त हुए। ६ महीने तक उन्होंने आर्टीलरी की ट्रेनिंग भी ली।

- लेफ्टिनेंट अर्चित वार्डिया ने १७५ मेड रेजीमेंट में प्रवेश किया, उनने अपनी माँग पर सियाचीन ग्लेसियर जैसी सबसे कठिन पोस्ट ली।
- २० जुलाई, २०११ में रात्रि ९ बजे सियाचीन ग्लेसियर में दुश्मनों के बम ब्लास्ट से बहुत सारे सैनिकों एवं अपने सीनियर की रक्षा के लिए २० हजार फीट की ऊँचाई से अद्‌भुत साहस दिखाते हुए जलते हुए बंकर में कूद पड़े। जलने एवं दम घुटने के कारण अर्चित वार्डिया की मृत्यु हो गई। साथ में मेजर गुरफेज सिंह भी मृत्यु की गोद में समा गये।
- अर्चित वार्डिया का संदेश था कि—हर एक को मरना है लेकिन मेरी मौत सबको याद रहेगी।

42 एक सच्ची बलिदानी गाथा
अमरशहीद गौतम जैन

- २९ मई, १९७९ को मुम्बई के उपनगर थाणे में गौतम का जन्म हुआ। वह श्री सुमतप्रकाश एवं सुधा जैन की सबसे छोटी संतान थी जिसे प्यार से सभी छोटू कहते थे। अपने कार्य की वजह से सुमतजी इन्दौर (म॰ प्र॰) में बस गये। गौतम ने सत्यसाँई विद्या स्कूल में सुसंस्कारित शिक्षा पूरी की।
- राष्ट्रीय रक्षा अकादमी के १९९९ बेच से पासआऊट कर अपने सत्र में सबसे कम उम्र वाले सेना के ऑफिसर की हैसियत से इंडियन मिलिट्री अकादमी देहरादून से मई २००० में कमीशन प्राप्त किया।
- १७३ फील्ड रेजीमेंट (आर्टिलरी) यूनिट को कश्मीर के राजौरी जिले में काला कोट थाना क्षेत्र में लेफ्टिनेंट गौतम जैन के नेतृत्व में तैनात किया गया था। कमांडिंग ऑफिसर कर्नल एम॰ के॰ सिंह का हुक्म आया कि कुछ खूँखार आतंकवादी पाकिस्तानी सीमा से भारतीय क्षेत्र में शामिल हो रहे हैं, उनको ढूँढ़ निकालना और इस राष्ट्र विरोधी आतंकवादी गिरोह का सफाया करना है। अपने ऑफिसर के आदेश पर लेफ्टिनेंट गौतम जैन अपने जवानों के साथ दुर्गम जंगल, खाई पहाड़ों और बर्फीली हवा में दुश्मन को ढूँढ़ने निकल पड़े।
- १ नवम्बर, २००१, सुबह ६ बजे अपने जांबाज जवानों के साथ अपनी यूनिट का नारा "जय नारायण बजरंग बली, भारत माता की जय" के नारों से आकाश गुंजायमान करते हुए इनकी टुकड़ी का सामना आतंकवादियों से हुआ जो झाड़ियों में छिपे बैठे थे। नायक सूबेदार भगवान सिंह ने जब सूचना दी कि सामने कोई है तभी ३-४ गोलियाँ उनकी जाँघों में लग चुकी थी, लेफ्टिनेंट गौतम जैन ने तुरन्त मोर्चा सम्भालते हुए अपने अन्य सैनिक जवानों का मनोबल बढ़ाते हुए दुश्मन पर गोलियाँ दागना शुरू कर दी, मुठभेड़ के दौरान आतंकवादियों ने अत्याधुनिक हथियारों का प्रयोग किया एक छिपे हुए आतंकवादी की अंधाधुंध गोलियों से २२ वर्षीय सेनानायक लेफ्टिनेंट गौतम जैन के सीने में गोली लगने के बाद भी ऑपरेशन NIAJ में आगे जाकर तीन आतंकवादियों को मौत के घाट उतार दिया जब अंत समय आया तो इस रंणबांकुरे ने अपनी यूनिट के नारे भारतमाता की जय का उद्घोष करते हुए बलिदान दे दिया।
- भारतीय सेना के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अपनी शौर्य गाथा रचने वाले इस वीर को भारत शासन द्वारा स्पेशल सर्विस मेडल 'सुरक्षा' व "बेज ऑफ सेक्रीफाईस एवं सर्टिफिकेट ऑफ ऑनर" दिया गया। कमांडिंग ऑफिसर १७३ फील्ड रेंजीमेन्ट द्वारा अशोक चक्र हेतु प्रमोट किया गया।

43 विश्व के कोने-कोने में विराजमान है जैनधर्म

अमरीका, फिनलैण्ड, सोवियत गणराज्य, चीन एवं मंगोलिया, तिब्बत, जापान, ईरान, तुर्किस्तान, इटली, एबीसिनिया, इथोपिया, अफगानिस्तान, नेपाल, पाकिस्तान आदि विभिन्न देशों में किसी न किसी रूप में वर्तमानकाल में जैनधर्म के सिद्धान्तों का पालन देखा जा सकता है। इन देशों में मध्यकाल में आवागमन के साधनों का अभाव एक-दूसरे की भाषा से अपरिचित रहने के कारण, रहन-सहन, खान-पान में कुछ-कुछ भिन्नता आने के कारण हम एक-दूसरे से दूर हटते ही गए और अपने प्राचीन सम्बन्धों को भूल गए।

सम्पूर्ण विश्व में जैनधर्म था, इसका संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है -

- अमरीका में आज भी अनेक स्थलों पर जैनधर्म श्रमण संस्कृति का जितना स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। वहाँ जैन मंदिरों के खण्डहर प्रचुरता में पाये जाते हैं।
- अफगानिस्तान, ईरान, इराक, टर्की आदि देशों तथा सोवियत संघ के जीवन सागर एवं ओब की खाड़ी से भी उत्तर तक तथा लाटविया से उल्लई के पश्चिमी छोर तक किसी काल में जैन धर्म का व्यापक प्रचार-प्रसार था।
- चीन की संस्कृति पर जैन संस्कृति का व्यापक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। चीन में भगवान् ऋषभदेव के एक पुत्र का शासन था। जैन संघों ने चीन में अहिंसा का व्यापक प्रचार-प्रसार किया था। अतिप्राचीनकाल में भी श्रमण संन्यासी यहाँ विहार करते थे। हिमालय क्षेत्र आविस्थान को दिया और कैस्पियाना तक पहले ही श्रमण संस्कृति का प्रचार-प्रसार हो चुका था।
- चीन के जिगरम देश का ढाकुल नगर में राजा और प्रजा सब जैन धर्मानुयायी हैं। पीकिंग नगर में 'तुबावारे' जाति के जैनियों के ३०० मंदिर हैं, जो सब मंदिर शिखर बंद हैं। इनमें जैन प्रतिमाएँ खड्गासन व पद्मासन मुद्रा में विराजमान हैं। कोरिया में भी जैनधर्म का प्रचार रहा है।
- तिब्बत में जैनी आवरे जाति के हैं। एरुल नगर में एक नदी के किनारे २०,००० जैन मंदिर हैं। खिलवन नगर में १०४ शिखरबंद जैन मंदिर हैं। वे सब मंदिर रत्नजड़ित और मनोरम हैं। यहाँ के वनों में ३०,००० जैन मंदिर हैं।
- इस्लाम की स्थापना के समय अधिकांश जैनी अरब छोड़कर दक्षिण भारत आ गए। अरब में बहुत से जैन मंदिर के खण्डहर हैं, जो देखने नहीं दिए जाते। फोटो लेना भी मना किया गया है।
- कम्बोडिया के प्राचीन मंदिरों में जैन परम्परा के अस्तित्व को देखा जा सकता है।

- थाईलैण्ड में नागबुद्ध नाम से पूजित सभी प्रतिमाएँ भगवान् पार्श्वनाथ की हैं।
- सिकन्दर अपने साथ कल्याण मुनि को ले गया था। उनके कारण बहुत से यूनानी जैन बने। उन्होंने ने भी अंत समय सल्लेखना धारण की। दिगम्बर मूर्तियाँ भी बनाई गई थीं। यूनानी साहित्य में यह वर्णन मिलता है।
- बौद्ध शास्त्र की लेखिका श्रीमति डेविड लिखती हैं – **श्रेणिक का पुत्र अभयकुमार दिगम्बर साधु हो गया था। उन्होंने ईरान में धर्म प्रचार किया, जिससे वहाँ राजकुमार अद्रिक जैन साधु बना।**
- श्रीलंका में ई. पू. चौथी शताब्दी में सिंहनरेश पाण्डुकाभय ने वहाँ जैन मंदिर व मठ बनवाया था। इक्कीस राजाओं के राज्य तक ये मठ व मंदिर मौजूद थे, किन्तु ई. पू. ३८ में राजा वट्टगामिनी ने उनको नष्ट करके बौद्ध विहार बनवाया।
- नेपाल में जैनधर्म था। वहाँ के पशुपतिनाथ मंदिर में आज भी अनेक जैन मूर्तियाँ रखी हुई हैं। वर्तमान में भी यहाँ काफी जैन समाज है। १९९१ में महावीर जैन निकेतन बनाया गया है। एक ही परिसर में नीचे-ऊपर दिगम्बर और श्वेताम्बर मंदिर बने हुए हैं। इसके अतिरिक्त अब अनेक जैन मंदिर और भी स्थानों पर बन चुके हैं।
- पाकिस्तान में ६ मंदिर हैं। इतिहास की किताबें बताती हैं कि चौदहवीं सदी में इन मंदिरों को उस वक्त के राजपूत राजाओं ने बनवाया था। नगरपारकर में १ मंदिर, ३ मंदिर बोधिसार में, १ गोरी और १ वीरवाह में बना है। गोरी मंदिर को छोड़कर बाकी मंदिरों का ताल्लुक भगवान् महावीर के दौर से है।
- ७ वीं शताब्दी के चीनी यात्री ह्वेन-सांग के अनुसार - पंजाब के सिंहपुर आदि स्थानों एवं अफगानिस्तान तक दिगम्बर जैनियों का बाहुल्य था। उनकी संख्या पर्याप्त थी। रावलपिण्डी में कोटेरा नामक ग्राम के निकट मूर्ति नामक पहाड़ी पर डॉ. स्टोन को प्राचीन मंदिर मिला था।
- ईरान, स्याम और फिलिस्तीन में दिगम्बर जैन साधुओं का उल्लेख पाया जाता है।
- यूनानी लेखक मिस्र, एबीसीनिया और इथोपिया में भी दिगम्बर मूर्तियों का अस्तित्व बताते हैं।
- कम्बोडिया, चम्पा, बल्गेरिया आदि में भी जैनधर्म का प्रचार हुआ है।
- ऋषभदेव ने बहली (बेक्ट्रिया), यवन (यूनान), सुवर्णभूमि (वर्मा), पण्डव (ईरान) आदि देशों में भ्रमण किया था।

44

जैन गुफाएँ

खण्डगिरि-उदयगिरि के गुफा मंदिर

एलोरा की गुफा

पचार हिल की जैन गुफा (गया)

बराबर और नागार्जुनी पहाड़ी की जैन गुफाएँ

भद्रबाहु गुफा

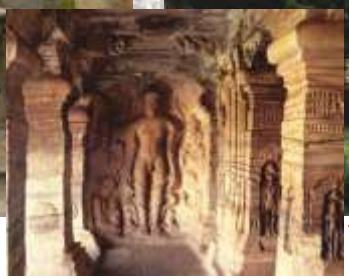

बदामी की जैन गुफा

राजगृही स्थित सप्त पर्णी गुफा

सित्तनवासन की जैन गुफा

- प्राचीनकाल में दिगम्बर जैन साधु संहनन के कारण वनवासी, परिव्राजक होते थे। अतएव बस्तियों से दूर निर्जन वन अथवा पहाड़ियों पर बनी प्राकृतिक गुफाएँ उनके अस्थायी आश्रय होते थे।
- इन गुफाओं का ईसा पूर्व दूसरी तीसरी शताब्दी में एक व्यवस्थित जैन अधिष्ठान के रूप में उपयोग किया जाता था। पाँचवीं से बारहवीं शताब्दी पर्यन्त गुफा स्थापत्य का स्वर्ण युग था।
- उड़ीसा में खण्डगिरि-उदयगिरि के गुफा मंदिर, बिहार में राजगृही के सप्तपर्णी गुफा, कर्नाटक में श्रवणबेलगोलस्थ चन्द्रगिरि स्थित भद्रबाहु गुफा, सौराष्ट्र में जूनागढ़ की, कर्नाटक में बदामी, महाराष्ट्र में अजन्ता, एलोरा, एहोल, पटनी, नासिक, अंकई, धाराशिव (तेरापुर), गया में स्थित पचार हिल, बराबर और नागार्जुनी पहाड़ी की गुफा, मध्यप्रदेश में विदिशा के निकट उदयगिरि की गुफाएँ तथा तमिलनाडू में कुलुमुलु एवं सित्तनवासन की उत्खनित गुफाएँ एवं गुफा मंदिर जैन गुफा स्थापत्य के महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं।